Fortnightly per copy Rs. 12/- only

ओ३म्

18th October 2016

आर्य जीवन
ఆర్య జీవన్

संस्कृति संरक्षण व सामाजिक परिवर्तन का संकल्प

హిందీ-తెలుగు ద్విభాషా పక్ష పత్రిక

Date of Publication 2nd & 17th of every Month, Date of posting 3rd and 18th of every month

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की अंतरंग सभा का आधिवेशन सम्पन्न

सभा ने महत्वपूर्ण एवं ऐतिहासिक निर्णय लिए

भारत देश के समस्त प्रान्तों में प्रतिनिधि सभाओं के विवादों को समाप्त करने के लिए २००१ को आधार मानकर

सारे प्रांतों में प्रांतीय सभाओं के चुनाव सम्पन्न करवाने का प्रस्ताव पारित

तीनों पक्षों को कोर्ट कमीश्नर द्वारा दिए गए आदेशों के अनुसार तीनों पक्षों ने भी मुम्बई में उक्त निर्णय लिया था

तीनों पक्षों द्वारा लिए गए निर्णय पर स्वामी आर्यवेश जी की अध्यक्षता में सम्पन्न बैठक में प्रस्ताव पारित कर मुहर लगाई गई

अब बारी आर्य जनता की हैं वह एकता चाहती है या नहीं इस पर चिंतन कर लें

समस्त भारत देश के आर्य विद्वान, वरीष्ठ संन्यासी, विभिन्न विश्व विद्यालयों में काम कर रहे आर्य विद्वान, वरीष्ठ पुरोहित और भजोनपदेशक तथा देश के समस्त आर्य नेताओं का और सम्भव हुआ तो कुछ विदेशी आर्य प्रतिनिधियों को निमंत्रित कर आर्य समाज की एकता को अमली जामा पहनाने के लिए तथा आर्य समाज को सशक्त ताकत रूप में उभारने के लिए एक बृहद् सम्मेलन आयोजित करने का निर्णय

राष्ट्रीय स्तर के मुद्दों को भी छाँटा जाएगा व राष्ट्रीय क्षितिज पर आर्य समाज को खड़ा किया जाएगा

साधु-संगठन

अब हमने हरिद्वार के कुम्भ मेले के उपलक्ष्य में योग-सिद्ध साधकों के सन्धान में और साधुओं के संगठन के सम्बन्ध में ध्यान दिया। कुम्भ-मेले में भारत के और तिब्बत के लाखों साधुओं का समागम होता है।

ऐतिहासिक लोग कहते हैं कि राजा हर्षवर्धन के राज्य काल में कुम्भ-मेले का प्रवर्तन प्रयाग-क्षेत्र में हुआ था। प्रति १२ वर्ष बाद उन्होंने प्रयाग में हिन्दू और बौद्ध साधुओं के सम्मेलन का आह्वान किया था। तब से कुम्भ योग में हरिद्वार में, प्रयाग में, नासिक में और उज्जयिनी में संन्यासियों के महासम्मेलन होते हैं।

हरिद्वार में- चैत्र संक्रान्ति (महाविषुव संक्रान्ति) में कुम्भ-स्नान होता है। ब्रह्मकुण्ड में मुख्य स्नान होता है। शिवरात्रि में प्रथम स्नान, चैत्र अमावस्या में द्वितीय स्नान और महाविषुव संक्रान्ति में तृतीय या प्रधान स्नान होता है।

प्रयाग में- पौष संक्रान्ति (मकर-संक्रान्ति) में प्रयाग[३५३] के त्रिवेणी संगम में कुम्भ मेले का स्नान होता है। यह ही प्रथम या प्रधान स्नान है। द्वितीय स्नान परवर्ती अमावस्या में और तृतीय स्नान वसन्त-पंचमी में होता है।

नासिक में- चातुर्मास्य में आषाढ़ शुक्ला एकादशी से कार्तिक शुक्ला एकादशी तक नासिक में कुम्भ-मेला लगता है। इस मेले का प्रथम स्नान श्रावण मास में बृहस्पति के साथ मंगल के और शुक्र के साथ सिंह राशि के मिलन से या कुम्भयोग में होता है। यह ही प्रथम स्नान है। भाद्र की अमावस्या में यहाँ द्वितीय स्नान और कार्तिक की शुक्ला एकादशी में तृतीय स्नान होता है। संन्यासी लोग नासिक से ढाई योजन की दूरी पर गोदावरी के उत्पत्ति स्थान (लम्बकेश्वर) में रहकर कुशावर्त घाट में स्नान करते हैं।

उज्जैन में- उज्जयिनी का कुम्भ मेला वैशाखी पूर्णिमा को कुम्भलग्न में होता है। यहाँ यह एकमात्र ही प्रथम और प्रधान स्नान होता है।

अर्ध-कुम्भ- प्रति ६ वर्ष बाद हरिद्वार में और प्रयाग में अर्ध-कुम्भ मेला होता है[३५४]।

सुना जाता है कि हर्षवर्धन कुम्भ-मेलों के स्थानों में विराट् महायज्ञों के अनुष्ठान करते थे, सर्वस्व दान किया करते थे। इन्हीं स्थानों में ही साधु-संन्यासी और ज्ञानियों के सम्मेलनों के कारण कुम्भ-मेलों का प्रवर्तन हुआ था। इन सम्मेलनों में लक्ष-लक्ष- साधु-संन्यासियों की शोभायात्रा एक अपूर्व दृश्य है। मैं तीन बार हरिद्वार के कुम्भ-मेले में सम्मिलित हुआ था[३५५]। हरिद्वार कुम्भ मेले में यह मेरी प्रथम उपस्थिति थी। अब मैंने विभिन्न नेताओं और विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों के नेताओं से अपने दो विषयों पर विचार-विमर्श के लिये भेंट की थी।

शंकराचार्य के उत्तराधिकारियों से भेंट

शंकराचार्य ने संन्यासियों को एकताबद्ध करने के लिये और उनसे जगत् की उन्नति कराने के लिये भारत की चारों सीमाओं में संन्यासियों के चार मठ स्थापित किये थे। उत्तर में बदरीनारायण-क्षेत्र में **ज्योतिर्मठ**, दक्षिण के क्षेत्र में **श्रृंगेरी मठ**, पश्चिम के द्वारावती क्षेत्र में **शारदा मठ** और पूर्व के पुरुषोत्तम क्षेत्र में **भूगोवर्धन मठ** स्थापित करके उन मठों के संचालनार्थ चार शिष्यों को प्रतिनिधि के रूप में नियुक्त किया था। संन्यासियों को उन्होंने दस सम्प्रदायों में विभक्त करके उनको चार मठों के अन्तर्गत कर दिया था। आज भी संन्यासी लोग उन चार मठों के अन्तर्गत दस नामों में से ही किसी न किसी नाम से अपना पिरचय देतेहैं[३५६]।

संन्यासी- श्रृंगेरी मठ के संन्यासियों के नाम-सरस्वती, पुरी और भारती ये तीन। गोवर्धन मठ के- वन और आरण्य ये दो। शारदा मठ के- तीर्थ और आश्रम ये दो और ज्योतिर्मठ के- गिरी, पर्वत और सागर ये तीन नाम हैं।

ब्रह्मचारी- श्रृंगेरी मठ के ब्रह्मचारी **चैतन्य**, गोवर्धन मठ के ब्रह्मचारी **प्रकाश**, शारदा मठ के ब्रह्मचारी **स्वरूप** और ज्योतिर्मठ के ब्रह्मचारी आनन्द हैं।

शंकराचार्य के चारों मठों से सम्बन्धित हजारों संन्यासी और ब्रह्मचारी कुम्भ-मेले में उपस्थित हु थे। मैंने इनके चारों शंकराचार्यों से और प्रधान-प्रधान संन्यासियों से केवल साधु-संगठन के लिये उपदेश, परामर्श और सहयोग माँगा था। मेरी प्रार्थना थी-"आप में से कई एक संन्यासी आ जाइये। हम लोग सारे भारतवर्ष में कम से कम एक हजार संन्यासी संगठित और मिलित हो जायें।

हमारे उद्देश्य रहेंगे-(१) वेद प्रतिपादित धर्म का उद्धार और प्रचार करना, (२) सामाजिक आदर्श और मर्यादा को देशवासियों के सम्मुख स्थापित करना, (३) देश को विदेश और विदेशियों के प्रभाव से मुक्त करना, (४) देश के मंगल के लिये मन और जीवन समर्पित कर देना।

आप में से ही कोई न कोई इस कार्य के संचालक, कणधार बन जाइये।"

उनके मनोभाव-हमारी इस प्रार्थना पर चारों मठों के चारों शंकराचार्य और बड़े-बड़े संन्यासियों ने इस आशय पर अपने मनोभावों को इस रूप से प्रकट कर दिया-"हम ब्रह्मवादी संन्यासी हैं, अद्वैतवादी हैं। हमारे लिये ब्रह्म ही एकमात्र सत्य है। राष्ट्र, समाज, परिवार, जीवन, जगत् और ये सब स्वतन्त्रता-परतन्त्रता, वर्ण-आश्रम, हमारा-तुम्हारा भाव सब कुछ मिथ्या हैं। मिथ्या के लिये हम कुछ भी करना व्यर्थ समझते हैं।"

हम उन्हें केवल यह कहकर चले आये थे- "दुःख की बात है कि आपके भोजन के लिये अन्न, पीने के लिये पानी, रहने के लिये स्थान, सर्दी के लिये कम्बल, हवा के लिये पंखा और सेवा के लिये शिष्य ही एकमात्र सत्य स्पष्ट हो रहे हैं, शेष सभी कुछ मिथ्या मालूम पड़ते हैं[३५७]।"

वैष्णव सम्प्रदायवादियों से भेंट

इसके बाद निराश होकर मैं वैष्णव-सम्प्रदाय के प्रधान-प्रधान नेताओं के पास गया था। ये लोग भी कुम्भ मेले में हजारों की संख्या में एकत्र हु थे। ये लोग द्वैतवादी और वैष्णव-भक्त हैं।

वैष्णवों के अन्दर सम्प्रदाय बहुत हैं। शंकराचार्य के समय में भी बहुत प्रकार के वैष्णव वर्त्तमान थे। अब मात्र रामानुजी, विष्णुस्वामी माध्व और निम्बार्की सम्प्रदाय ही प्रबल हैं। इन सम्प्रदायों का वैरागी या वैष्णव नाम से परिचय दिया जाता है। ये लोग द्वैतवादी हैं और अद्वैतवाद के विरोधी हैं। अवतारों की अपासना करना ही इनकी साधना है। सत्ययुग के नारायण, वेतायुग के श्रीरमचन्द्र, द्वापरयुग के श्रीकृष्ण और कलियुग के श्री चैतन्य देव की उपासना करना ही इनकी मुख्य साधना है। रामानुजाचार्य, बल्लभाचार्य, निम्बर्काचार्य, मध्वाचार्य और चैतन्यदेव ही इनके स्व-स्व सम्प्रदायों के अवलम्बन हैं. । रामायेत, रामानुजी और गौड़ीय वैष्णव नामों से भी इनका परिचय होता है। दक्षिण भारत में रामानुजी वैरागी या श्री-वैष्णव अधिक संख्या में हैं। इस प्रकार अयोध्या और चित्रकूट में रामायेत वैष्णव, वृन्दावन अंचल में श्रीकृष्ण के उपासक, बंगाल और उड़ीसा में गौड़ीय वैष्णव, आसाम में शंकरदेव के उपासक शंकर वैष्णवों की संख्या अधिक है। वैष्णव या वैरागी सम्प्रदायों के अन्दर चार मठधारी सम्प्रदाय हैं- (१) रामानुजाचार्य का श्री-सम्प्रदाय, (२) मध्वाचार्य का ब्रह्म-सम्प्रदाय, (३) वल्लभाचार्य का वल्लभचारी या रुद्र सम्प्रदाय और (४) सनक सनन्दन-सनातन सनत्कुमार का निम्बार्क सम्प्रदाय।

उत्तर भारत में रामानुजी से रामानन्दी वैष्णव अधिक प्रभावशाली हैं। रामानुज के शिष्य देवानन्द, देवानन्द के शिष्य हरिनन्द, हरिनन्द के शिष्य राघवानन्द और राघवानन्द के शिष्य रामानन्द थे। इसलिए परम्परागत रूप से रामानुज से रामानन्द चतुर्थ शिष्य थे। इन सभी के अन्दर दो श्रेणिया हैं- उदासीन और गृहस्थ। गृहस्थ वैष्णव लोग उदासीनों के या गृहस्थ वैष्णव गुरुओं के निर्देशानुसार संसार धर्म का पालन करते हैं। उदासीन वैष्णव तीर्थ-पर्यटन, भिक्षा या देव-पूजा या मठों के महन्त बनकर आजीविका चलाते हैं। भिन्न-भिन्न स्थानों में इनके आश्रय-स्थल हैं और गृहस्थ वैष्णवों की सहायता से पुष्ट मठ, मन्दिर, देवोत्तरभूमि या अतिथि-शालायें इनके अवलम्बन हैं।

इन वैष्णव सम्प्रदायों के बड़े-बड़े गोस्वामी, महन्त, गुरु और साधु-संन्यासी हरिद्वार के कुम्भ मेले में सम्मिलित हु थे। मैंने सभी की सेवा में उपस्थित होकर देश, राष्ट्र और समाज की शोचनीय दशा के प्रति दृष्टि आकर्षण करके अपनी दोनों प्रार्थनाओं को पूर्ववत् रखा था। इन्होंने भी दूसरे ढंग की भाषा का प्रयोग करके मुझको निराश कर दिया था।

उनके मनोभाव-उन सबके कहने का सारांश यह था- ''हमारे ये शरीर श्रीराम या श्रीकृष्ण के भजन के लिए हैं, दूसरे कार्य के लिए नहीं हैं। दूसरे कार्य का करना, भगवान् के स्थान में देश, समाज, राष्ट्र की सेवा करना महापाप है। मानव शरीर व्यर्थ कार्य के लिए नहीं है। महाप्रभु की सेवा और चिन्तन से मुक्ति मिलेगी, देश-समाज-राष्ट्र की वैषयिक चिन्ता से भगवद्-भक्ति ढीली हो जाएगी, मुक्ति-लाभ या गोलोकवैकुण्ठ में जाने के मार्ग में प्रबल बाधायें आ जाएंगी। मानव-जीवन इतना सस्ता नहीं है। चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करके तब भक्ति-साधना के एकमात्र अवलम्बन=भजन के लिए शरीर मिला है। इन शरीरों को देश-समाज-राष्ट्र की भजन-विरोधी सेवा के लिए समर्पण करना बुद्धिमानों का कार्य नहीं है।''

वैष्णव-गुरुओं से निराश होकर लौटते समय मैंने केवल यह वाक्य कहा था-''जिस देश में ऐसे भक्तों की संख्या अत्यधिक है, उस देश का सर्वनाश निश्चित है[३५९]।''

वैष्णव सम्प्रदाय की शाखा-स्वरूप अन्य बहुत सम्प्रदाय हैं। मैं इन सम्प्रदायों के नेताओं से भी मिला था और सभी की सेवा में साधु-संगठन के उद्देश्य का निवेदन किया था और प्रेरणा दी थी। सभी ने ही एक जैसी निराशाजनक बातें कहीं। उन सम्प्रदायों के नाम ये हैं रामानुजी, रामाईत, कबीर-पन्थी, दादू-पन्थी, रैदासी, सेन-पन्थी, रुद्र-सम्प्रदाय, मीराबाई, तुलसीदास, विट्ठलभक्त, चैतन्य सम्प्रदाय, स्पष्टदायक सम्प्रदाय, रामवल्लभी, साहब-धर्मी, बाउल, दरवेश, आउल, कर्ताभजा, न्याड़ा, सहजिया, खुशि-विश्वासी, गौरवादी, राधावल्लभी, सखी समप्रदाय, चरणदासी, हरिश्चन्द्री, चरपन्थी, माधवीपन्थी, बैरागी, नागा और ललिता। इनमें बंगाल के वैष्णव सम्प्रदाय अधिक हैं। इनके लिये साधु-संगठन का अर्थ समझना ही कठिन हुआ था।

कुम्भ मेले की शोभा-यात्रा

हिन्दू धर्म के विभिन्न साम्प्रदायिक रूप देखने के लिये मैंने कुम्भ मेले के स्नान-यात्रियों की शोभा-यात्रा को देखा था। उसका स्वरूप निम्न प्रकार का था-

दिग्विजय डंका- शंकराचार्य के लिये जय ध्वनि, एक नागा संन्यासी घोड़े पर सवार होकर दो नगाड़े पीटते हुए जाता है।

दिग्विजय का झण्डा- शंकारचार्य की विजय-पताका लेकर एक नागा संन्यासी गेरु पताका लेकर घोड़े पर सवार होकर जाता है।

कसरत- नागा संन्यासी लोग पदातिक और अश्वारोही सैन्यों के रूप में युद्धभूमि में जाने के ढंग से अग्रसर होते हैं।

निदर्शन- भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों के और अखाड़ों के पताका-प्रदर्शन।

ऐक्यतान वादन- युद्ध कालीन समवेत वाद्यध्वनि।

गैरिक पताका- हाथी के ऊपर बैठे हु सन्यासी के हाथों में त्याग के प्रतीक अति बृहत् गैरिक पताका की धारणा।

विजय पताका- युद्ध में जय लाभ का निदर्शन हाथी के ऊपर जरीदार मखमल की बड़ी नीले रंग की पताका।

दण्डधारी- नागा संन्यासियों की सोने-चांदी से मण्डित दण्डों को धारण करके विजय-गौरव के ढंग से अग्रगति।

धूनाधारी- युद्ध कालीन उत्साह-व्यंजक धूप-धूना के साथ अग्रगति।

बल्लम पूजा - बल्लमों (भालों) से शत्रु-जय, बाद में बल्लमों की पूजा। भारतवर्ष के हजारों लाखों नर-नारियों के सम्मुख त्यागी नागा साधु-संन्यासियों का विजय गर्व उन्मादन के साथ सामरिक ताल से पादक्षेप बहुत ही विस्मय के कारण हैं।

"पराधीन भारत में भी इतना हर्ष ? क्या ये लोग भूल गए हैं कि हमारी मातृ-भूमि विदेशियों के हाथों में परतन्त्र है और पितृ-पुरुषों का धर्म विदेशियों से पद-दलित है ? क्या इन लोगों को मालूम नहीं है कि विदेशी राहु ने हमारी देश-जननी को ग्रास कर लिया है और अब सर्वग्रास के लिए तैयार हो गया है ? क्या इन लोगों को मालूम नहीं है कि देश में अदूर भविष्य में जो क्रान्ति आने वाली है, उसमें मात्र एक हजार साधु-संन्यासी त्यागी-महात्मा भी भाग लें और अपने-अपने जीवनों की आहुतियों के रूप में अर्पण कर दें तो देश सर्वनाश से बच जाए ?" मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया कि जब तक कुम्भ मेला चलता रहेगा, मैं देश, जाति, धर्म-रक्षा के लिये मुख्य-मुख्य सब ही को प्रेरणा दूँगा। इन सबको संगठित रूप से मातृ-भूमि की सेवा और रक्षा के लिए सदा तैयार रहने के लिए अनुरोध करूँगा[३६९]। गृहस्थ नर-नारी और भिन्न-भिन्न राजपुरुषों का भी यहाँ आगमन हुआ है। इन्हें भी इस कार्य में सहयोग देने के लिए अनुरोध करूँगा और इसके बाद योग-सिद्ध साधकों के सन्धान के लिए हिमालय और तिब्बत में भ्रमण करूँगा।

कुम्भ मेले की भीड़-भाड़ में निराशा- कुम्भ स्नान के लिए बहुत पहले ही हजारों-हजार तीर्थयात्री हरिद्वार पहुंच गए थे। भीड़ से बचने के लिए मैंने चण्डी पहाड़ पर आश्रय लिया था। हरिद्वार आने के बाद मुझे हिन्दू जगत् के विभिन्न सम्प्रदायों की स्थिति और जनता के सम्बन्ध में प्रत्यक्ष अनुभव हुआ था। मैं यथासाध्य प्रधान-प्रधान सभी सम्प्रदायों से मिला था और उनके गुरुओं और मुख्य पुरुषों के साथ बात-चीत की थी। मेरा उद्देश्य था-स्वदेश और स्वधर्म की रक्षा के लिए उनके भीतर उत्साह पैदा करना, परस्पर विरोधी सम्प्रदायों के साधुओं को संगठित करके उस उत्साह को क्रियात्मक रूप में परिणत करना। परन्तु उन्होंने मुझे अपने उद्देश्य से भ्रष्ट करने का ही प्रयत्न किया, जिससे विभिन्न सम्प्रदायों के गुरुओं से मैं निराश हुआ था[३६०]।

निराशा में आशा- बहुत सम्प्रदायों के नेता मेरे उद्देश्यों के विरोधी बनकर मेरे विरुद्ध घूम-घूमकर प्रचार करने लगे थे और मेरे रहने के स्थान पर आकर मेरे ऊपर आक्रमण और अत्याचार के लिए जनता को भड़काने लगे थे। इसका सुफल यह हुआ कि साधु-संन्यासी, यति और गृहस्थ तीर्थ-यात्री मुझ जैसे पाखण्डी को देखने के लिए कौतूहली होकर चण्डी पहाड़ पर आने लगे। धीरे-धीरे दिन-प्रतिदिन मेरे दर्शनार्थी तीर्थ-यात्रियों की संख्या बढ़ने लगी। दर्शनार्थी तीर्थ- यात्रियों के सम्मुख खड़े होकर मैंने प्रतिदिन प्रातः और मध्याह्नः में स्वदेश और स्वधर्म की रक्षार्थ उपदेश देना प्रारम्भ कर दिया। मेरे जीवन में जनता के सम्मुख व्याख्यान देने का सूत्रपात यहीं से हुआ था। सभी पुरुष-स्त्री खड़े होकर उपदेश सुनकर चले जाते थे। सरकारी कर्मचारी और शान्ति-रक्षक भी वहाँ आया-जाया करते थे। इससे मेरे लिए दो समस्यायें भी उत्पन्न हो गयीं थीं। एक तो यह कि जनता मुझे प्रणाम करने लगी और दूसरी यह कि वह पैसे भी भेंट में देने लगी थी।

मैंने कई-एक बार हाथ जोड़कर प्रार्थना की- "मुझको ये दोनों ही नहीं चाहिए। मेरे भोजन के लिए प्रतिदिन स्वल्प वस्तु की आवश्यकता होती है और पैसे की तो बिल्कुल ही आवश्यकता नहीं है। मुझे प्रणाम भी नहीं चाहिए। मैं एक मामूली संन्यासी हूं।" परन्तु मेरी इस प्रार्थना को जनता में से किसी ने भी नहीं सुना।

एक सज्जन ने कहा- "हम लोग आपको कुछ नहीं देते और आपको प्रणाम भी नहीं करते। अपने प्राचीन ऋषि-मुनि और पूर्वजों के प्रति सम्मान प्रदर्शित करते हैं, इसके सिवाय और कुछ नहीं। जो कुछ पैसे आपकी भेंट के लिए दिए जाते हैं, इसको भी रोकना नहीं चाहिए। यह भी हमारी जाति का अन्यतम सद्गुण है। यह भी प्राचीन धर्म-गुरुओं के प्रति श्रद्धा का प्रदर्शन मात्र है। आप इसको जहाँ चाहें, व्यय कर देना।" इस बात पर मैं निरुत्तर और मौन हो गया था।

राजा गोविन्दनाथ राय- गोविन्दनाथ राय उत्तरी बंगाल में नाटोर की प्रसिद्ध रानी भवानी के वंशज हैं। यह रानी सिराजुद्दौला के शासनकाल तक आधे बंगाल की शासन-कर्त्री थी, परन्तु अंग्रेजों ने धीरे-धीरे सब ही राज्य ग्रास कर लिया था जिससे ये लोग असहाय बन गए थे। अब ये लोग जमींदार मात्र हैं। राजा गोविन्दनाथ राय कुम्भ-स्नान के लिए हरिद्वार आए थे। आप अचानक रात्रि की शान्त, नीरव और निर्जन स्थिति में चार कर्मचारियों के साथ मशाल हाथ में लेकर मेरे पास आकर प्रणिपात करके बैठ गए और योग-विद्या के बारे में उपदेश माँगा। मैंने उनको उपदेश दे दिया और उन्होंने विदा-बेला में मेरे सम्मुख ग्यारह सौ एक रुपये की थैली भेंट के रूप में रख दी थी। मैंने समझाया कि मेरे लिए यह रुपया हानिकारक हो जाएगा। मेरे लिए यहां कुछ भी अभाव नहीं है परन्तु उन्होंने रुपया वापस नहीं लिया बल्कि प्रयोजनानुसार कुछ और गुरु-दक्षिणा के रूप में देने के लिए कहा था। उन्होंने सुना था कि मैं तिब्बत जाने के लिए विचार रखता हूं, जिससे उन्होंने मुझसे कहा कि "तिब्बत जाना अति कठिन और खतरनाक है। आप कभी उत्तर बंगाल में मेरे स्थान नाटोर तक आने की कृपा करें। हम आपके साथ अपने विश्वस्त किसी एक पहाड़ी व्यक्ति को संगी और साथी के रूप में कर देंगे।" परन्तु मेरा संकल्प था- काश्मीर जाकर हिमालय में भ्रमण करने का, फिर ल्हासा होकर दार्जिलिंग तक आने का और सम्भव हो तो गंगासागर भी जाने का। इसलिए इस संकल्प को ही मैंने दृढ़तर कर लिया था।

रानी लक्ष्मी बाई और गंगा बाई- एक-दो दिन के बाद ही झांसी की रानी लक्ष्मीबाई और उनकी सहचरी गंगाबाई ने तीन कर्मचारियों के साथ वहाँ आकर प्रणिपात किया। परिचय पूछने पर लक्ष्मीबाई आँखों में आँसू भरकर ओजस्विनी वाणी में कहने लगी-"मैं निःसन्तान और विधवा हूँ। मेरे पतिदेव की मृत्यु के बाद मेरे श्वसुर-कुल के वैध राज्य को अंग्रेजों का अधिकार बन गया। सुनते हैं कि अंग्रेज सेनापति बहुत अधिक संख्या में फौज लेकर मेरी झांसी को छीनने के लिए आ जाएगा।"

आँखों से आँसू बहाती हुई झांसी की महारानी ने कहा- "महात्मा जी ! मैं जिन्दा रहती हुई अपने श्वसुर-कुल के इस राज्य

को दुश्मनों को नहीं दूंगी । मैं लड़ाई करती हुई मर जाऊँगी, लेकिन झाँसी को चुपचाप लुटेरे डाकुओं को नहीं दूंगी । मेरे लिए इस प्रकार के मरण को वरण करना ही कल्याणकर है । आप मुझे आशीर्वाद दीजिए कि मैं हँसती हुई युद्ध में मर जाऊँ[३६१]।''

लगभग बीस वर्ष की एक तरुणी[३६२] के मुख से ऐसी बातें सुनकर मेरी समझ में आ गया कि भारतवर्ष में अभी तक भी वीर रमणियां मौजूद हैं, भारत वीर-शून्य नहीं है । रानी से मैंने कहा कि ''नश्वर शरीर को कोई भी स्थायी नहीं कर सकता है । स्वदेश और स्वधर्म की रक्षा के लिए जा अपने अस्थायी शरीर को दे देते हैं, वे कभी नहीं मरते । चिरकाल के लिए वे पूजा पाएंगे । हम भगवान् से आपके लिए शुभ और कल्याम की प्रार्थना करते हैं ।''

उन्होंने भी एक हजार एक रुपया मेरे सम्मुख रखकर सम्मान दिखाया । नाटोर के राजा से जैसा मैंने कहा था, उन्हें भी वैसा ही कहकर रुपये लेने से असहमति प्रकट की, लेकिन इन्होंने भी नहीं माना । इस समस्या से मुक्त होने के लिए मैंने भगवान् से प्रार्थना भी की थी, परन्तु जनता ने सुनी नहीं । सभी अपनी-अपनी सामर्थ्यानुसार रुपये-पैसे देने लगे थे । इनका सदुपयोग कैसे हो, मैं यही सोचने लगा । वे चली गई।

नाना साहब आदि का पुनरागमन- नाना साहब और नये अपरिचित तीन-चार सज्जन सात-आठ दिन के बाद फिर हमसे मिलने के लिए आए थे । ये सब कर्मशील और व्यस्त थे ।

नाना साहब ने कहा- ''हम लोग सारे भारतवर्ष में भ्रमण के लिए भिन्न-भिन्न दिशाओं में चले जायेंगे । अतिशीघ्र निर्दिष्ट तिथि में हम लोग चुने हुए स्थानों में सुस्पष्ट विद्रोह का युद्ध आरम्भ कर देंगे । तिथि अब तक ठीक नहीं हुई है । संगठन में हम लगे हुए हैं । आपसे आशीर्वाद लेने के लिए हम यहाँ आये हैं । हम जहाँ भी रहेंगे, आपको यथासम्भव सूचित करते रहेंगे ।''

मैंने कहा- ''जो आशीर्वाद मैं आप लोगों को दूँगा, आप लोग उसको अवश्य लेंगे- इसका ठीक-ठीक आश्वासन दीजिए । आशीर्वाद मैं अवश्य दूँगा ।''

उन्होंने कहा- ''आपका आशीर्वाद हमारे लिए शिरोधार्य है ।''

मैंने राजा गोविन्दनाथ राय और रानी लक्ष्मीबाई द्वारा प्रदत्त रुपये और जनसाधारण द्वारा प्रदत्त फुटकर पाँच सौ तैंतीस रुपये कुल छब्बीस सौ पैंतीस रुपये नाना साहब के हाथ में स्वदेश रक्षा के लिए दे दिए । इन्हें उन्होंने सहर्ष स्वीकार कर लिया ।

तब हमने कहा कि- ''जनसाधारण का नेतृत्व करना और आग लेकर खेल करना - ये दोनों ही खतरनाक हैं । साधारण सी भूल से भी सर्वनाश हो जाता है । हमारे पास भेंट के रूप में जो कुछ एकत्र हो जाएगा, सब कुछ आपके पास स्वदेश-रक्षा के लिए ही आशीर्वाद के रूप में भेजते रहेंगे ।''

फिर ये लोग प्रसन्न होकर चले गए । मैं भी हिमालय में योगी और साधकों को ढूंढ़ने की तैयारी में लग गया ।

क्रियात्मक रूप से योग साधना- हरिद्वार में कुम्भ मेले के बाहर निर्जन जंगल और पहाड़ी अंचलों में मैं मुख्य-मुख्य स्थानों में अधिकांश समय योग-साधना में बिताता था । इस उपलक्ष्य में मैंने पाँच योग-साधकों के संग में आने का सुयोग-लाभ किया था । उनका क्रियात्मक योग देखा । इनके नाम थे-स्वामी मोक्षानन्द तीर्थ, चिदानन्द ब्रह्मप्रकाश आरण्य, स्वामी दिव्यानन्द तीर्थ, स्वामी भक्तिविलास पांचरात्र और स्वामी निर्वाणानन्द पुरी । इनके प्रति मैं कृतज्ञ हूँ । इन्होंने मुझे क्रियात्मक रूप से योग-साधना के बारे में बहुत कुछ उपदेश भी दिया था ।

साधु जनता में जागृति- नाना साहब और रानी लक्ष्मी बाई के प्रचार के कारण साधु लोग मेरे साथ बार्तालाप की इच्छा से एक-एक करके सैकड़ों की संख्या में शंका-समाधान के लिए आने लगे । स्वधर्म-रक्षा के लिए विहित कार्यक्रम जानने के लिए भी वे लोग आते थे । मैंने सबसे ही अनुरोध किया था-

''आप लोग अपने-अपने सम्प्रदायों के अन्तर्भुक्त रहकर ही स्वधर्म-रक्षा के लिए तैयार हो जाइये । जनसाधारण के अन्दर धर्म-रक्षा के लिए नया उत्साह उत्पन्न कीजिये । धर्म हमारे पूर्वजों की और ऋषि-मुनियों की कीर्ति और दान है । अहिन्दू नर-नारियों के प्रभाव से जाति और धर्म को और कतिपय विदेशी पादरी या मौलवियों की धोखेबाजी से ऋषियों के वंशजों को बचाइये । धर्म की प्राथमिक शिक्षा के प्रथम पाठ का जनसाधारण में प्रचार कीजिये । प्रयोजनानुसार धर्म-रक्षा के लिए और जाति के कल्याणार्थ जीवन दे देना परम पुण्य कार्य है । जगह-जगह धर्म-प्रचार के लिए केन्द्रों की स्थापना कीजिये । साधुओं के जीवन में दोनों ही पुण्य कार्य हैं । प्रथम-एकान्त जीवन में आत्मिक उन्नति के लिए योग-साधना करना और दूसरा-सामूहिक जीवन के उत्कर्ष के लिए वेद-प्रतिपादित धर्म का प्रचार करना । इन दोनों में ही हमारा पारमार्थिक कल्याण निहित है । आप लोग इन केन्द्रों के अधीन रहकर संगठित हो जाइये । स्वदेश हमारी माता है और स्वधर्म हमारा पिता है । दोनों की रक्षा के लिए तत्पर रहिये और स्वेच्छा से जो साधु लोग इस व्रत को धारण करें उनके नामों की तालिका बनाते रहिये ।''

साधु लोगों ने कहा-''हम लोगों ने आपसे प्रेरणा पाते ही अपनी इच्छा से पहले ही लगभग ढाई सौ साधुओं के नामों की तालिका बना ली है । आप जब चाहेंगे, ये लोग एक साथ स्वदेश-रक्षा के लिये जुट जायेंगे ।''

मैंने कहा- ''उत्तर-दक्षिण और पूर्व-पश्चिम भारत में जितने सैन्यावास मौजूद हैं, वहां सुविधा के अनुसार कमलपुष्प और चपाती की बहु प्राचीन पद्धति से सैन्य और नागरिकों के अन्दर स्वदेश और स्वधर्म की रक्षा के लिए प्रेरणा और जागृति पैदा कर देना आवश्यक है ।'' तब वे लोग मेरी बातें शिरोधार्य करके चल दिये और बोले कि सबके साथ सम्बन्ध रखकर ही चलेंगे ।

मैने केवल इंगित से बोल दिया था कि ''उत्तर भारत में मेरठ की ओर, पूर्व भारत में बैरकपुर की ओर और दक्षिण भारत में वेल्लोर की ओर अवश्य जाना चाहिये । केवल आप लोग दिल्ली के योगमाया मन्दिर के पुरोहित त्रिशूल बाबा से सम्पर्क रखियेगा । वहाँ से नियमित समाचार मिलेगा और आप लोगों के समाचार भी हमको वहाँ से अवश्य मिलने चाहिये[३६३]।''

युद्ध समस्या का समाधान नहीं

-स्वामी अग्निवेश

जम्मू-कश्मीर के उरी क्षेत्र में सेना के शिविर पर हुए आतंकी हमले का जवाब देने के लिए भारत ने कूटनीतिक प्रयास से पाकिस्तान को अलगृथलग तो कर ही दिया, सर्जिकल स्ट्राइक से वहां चल रहे छह आतंकी शिविरों के अड़तीस आतंकियों को भी मार गिराया । बांग्लादेश, भूटान, अफगानिस्तान के इस्लामाबाद जाने से इनकार करने पर पाकिस्तान में होने वाला सार्क सम्मेलन भी रद्द हो गया है । सिंधु जल समझौते पर हमारी सख्ती से पाक पहले ही सहमा हुआ था । राजस्थान सीमा पर सेना की बंदोबस्ती उसकी बौखलाइट को दर्शा रही है । पाकिस्तान की परमाणु हमले की धमकी को तवज्जो न देते हुए भारत ने आतंकियों के खिलाफ मोर्चा खोल कर अपना रुख चाहिर कर दिया है । सीमा से दस किलोमीटर तक की जगह खाली करने का निर्देश जवाबी हमले की दृष्टि से उठाया गया कदम प्रतीत हो रहा है । सर्वदलीय बैठक के बाद विपक्ष का सरकार का साथ देना, सेना को हाई अलर्ट करना, पश्चिमी कमान के साथ ही अस्पताल कर्मियों की छुट्टियां रह करना युद्ध के संकेत दे रहा है ।

ऐसे में प्रश्न है कि क्या युद्ध एकमात्र विकल्प बचा है । क्या इससे आतंकवाद की समस्या दूर हो जाएगी ? हमारी प्राथमिकता युद्ध नहीं, आतंकवाद को समाप्त करना है और इस मामले में पाकिस्तान हमसे ज्यादा त्रस्त है । कभी स्कूलों पर, तो कभी धार्मिक स्थलों पर और कभी मीड़भाड़ वाले स्थानों पर आतंकी हमले होना वहां पर आम बात है । यह भी सर्वविदित है कि पाक की जनता वहां की सरकार से ज्यादा सेना पर विश्वास करती है । ये सब झेलना पाक सरकार की मजबूरी है । ऐसे में जरूरत है कि आपस में उलझने के बजाय भारत, पाकिस्तान और अफगानिस्तान संयुक्त कमान बना कर आतंकवाद के खिलाफ निर्णायक जंग लड़ें । सार्क देशों को भी इसमें शामिल कर लिया जाए तो और बेहतर होगा । पाकिस्तान को यह समझना होगा कि भारत ने पाकिस्तान की सीमा में नहीं बल्कि पीओके में कार्रवाई की, जो उसका है ।

पाकिस्तान से युद्ध होने के बाद हमारे सामने आने वाली चुनौतियों के बारे में भी सोचना होगा । यह युद्ध पाकिस्तान-भारत तक सीमित नहीं रहेगा । कई देश इस पर राजनीति करने को तैयार बैठे हैं । भले आज कई देश भारत के साथ खड़े दिख रहे हैं, पर युद्ध की स्थिति में यूरोपीय देशों के अलावा अरब देशों के पलटी मारने का अंदेशा है । क्या हमारी आतंरिक सुरक्षा इतनी सुदृढ़ है कि हम हर स्तर पर मामले को संभाल लेंगे । अगर है तो पठानकोट के बाद उरी में इतना बड़ा आतंकी हमला कैसे हो गया ? हमारी खुफिया एजेंसियां क्या कर रही थीं ? सेना ऐसे कैसे लापरवाह बनी रही कि आतंकियों ने हमले को इस तरह अंजाम दिया । कैसे वे बार-बार हमारी सीमा में घुस जाते हैं । वह भी तब जब क्षेत्र में हाई अलर्ट घोषित हो ।

सवाल यह भी है कि शिविर में आग कैसे लगी, इसकी पुख्ता पुष्टि अभी तक नहीं हुई है । निश्चित रूप से सेना की जवाबी कार्रवाई सराहनीय है, पर सेना में भी भ्रष्टाचार की बातें सामने आती रही हैं । आज के हालात में हर पहलू पर गौर करने की जरूरत है । जरूरत इस बात की सबसे ज्यादा है कि आतंकवाद की जड़ें कहां तक फैली हैं ? कौन इसका जन्मदाता है ? पाकिस्तान और भारत के मनमुटाव का फायदा कौन उठा रहा है ? इन दोनों देशों के झगड़े का फायदा किसे मिलेगा । दरअसल, अमेरिका ने अपने स्वार्थ के लिए आतंकवाद को जन्म दिया और इसकी आग में अपने हथियार बेचने लगा । इसमें दो राय नहीं कि पाकिस्तान में आतंकियों के जमावड़े के चलते हमारे देश में समय-समय पर आतंकी हमले हुए हैं । सेना और पारिस्तान की खुफिया एजेंसी भी आतंकियों को बढावा देती हैं, पर क्या पाकिस्तान की जनता इससे प्रभावित नहीं ? वहां पर भी कभी मासूम बच्चे, तो कभी सेना के जवान और कभी आम नागरिक आतंकी हमले में मर रहे हैं । कहना गलत न होगा कि हमारे देश से ज्यादा आतंकी हमले पाकिस्तानी अवाम झेल रहे हैं । तो ऐसे में पाक सरकार के साथ वहां के लोगों की स्थिति को ध्यान में रखते हुए हमें आगे बढने की जरूरत है । कहीं पाकिस्तान से युद्ध के चक्कर में हम जनता की परेशानियों और जरूरतों को न भूल जाएं । पाक के लोग भी हमारे ही हैं । जब विभिन्न समस्याओं से जूझते-जूझते देश का किसान आत्महत्या कर रहा हो, मजदूर के पास काम न हो, महंगाई और भ्रष्टाचार चरम पर हो, ऐसे में राफेल लड़ाकू विमान की उनसठ हजार करोड़ रुपए की डील की सहमति क्या साबित कर रही है ? युद्ध असली रूप लेता है तो और अन्य सौदे भी होंगे । स्वाभाविक है कि हथियारों पर बड़ बजड बनेगा । आज जरूरत इस बात को समझने की है कि खेलने-कूदने की उम्र में बच्चे कैसे आतंकवादी बन जा रहै हैं ? कैसे मजबूरी का फायदा उठा कर आतंकी संगठन इन बच्चों का इस्तेमाल कर रहे हैं ।

दरअसल, आतंकी संगठन अपने नापाक मकसद के लिए गरीब, भटके नौजवानों को बरगला कर आतंकी दुनिया में धकेल रहे हैं । ऐसा नहीं कि यह खेल पाकिस्तान में ही चल रहा हो । हमारा देश भी इससे वंचित नहीं है । यहां पर भी इसी तरह बेरोजगारी, गरीबी और हालात का फायदा उठाते हुए युवाओं को गलत रास्ते पर ले जाया जा रहा है । बीचृबीच में

शेष पृष्ठ १२ पर...

शिक्षा में भी मुनाफाखोरी

-जावेद अनीस

पिछले दिनों गुड़गांव में प्राइवेट स्कूल में पढ़ने वाले एक बच्चे के अभभिावक ने आरोप लगाया कि फीस न देने पर उनके बच्चे को स्कूल में तीन घंटे तक धूप में खड़ा रखा गया, इस दौरान बच्चे की हालत इतनी बिगड़ गई कि उसे अस्पताल में भर्ती करना पड़ा । इससे बच्चा इतना डर गया कि उसने स्कूल जाने से ही मना कर दिया । दूसरी घटना इंदौर की है, वहां के पैरंट्स एसोसिएशन सदस्य निजी स्कूलों में मनमानी फीस बढ़ोतरी की शिकायत लेकर अपने सांसद सुमित्रा महाजन के पास गए तो इस पर सुमित्रा महाजन ने अभिभावकों की मदद करने के बजाय उलटे यह नसीहत देती हुई नजर आईं कि अगर वे निजी स्कूलों की फीस नहीं भर पा रहे हैं तो अपने बच्चों का एडमिशन सरकारी स्कूल में करवा दें । उपरोक्त दोनों घटनाओं से अंदाजा लगाया जा सकता है कि हम किस जाल में फंस चुके हैं । यह त्रासदियां हमारे मौजूदा शिक्षा व्यवस्था की हकीकत बयान करती हैं, जिसे धंधे और मुनाफाखोरी की मानसिकता ने यहां तक पहुंचा दिया है । आज शिक्षा एक व्यवसाय बन गया है, जिसका मूल मकसद शिक्षा नहीं बल्कि ज्यादा से ज्यादा मुनाफा कमाना है । शिक्षा के बाजारीकरण का असर लगातार व्यापक हुआ है, अब शहर ही नहीं दूरदराज के गांव में भी प्राइवेट स्कूल देखने को मिल जाएंगे । पिछले वर्षों के दौरान देशभर के सरकारी स्कूलों में छात्रों की संख्या लगातार घटती जा रही है, वहीं प्राइवेट स्कूलों की संख्या में जबरदस्त इजाफा देखा जा रहा है । राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन यानी एनएसएसओ के आंकडों के मुताबिक, २००७-०८ में ७२.६ प्रतिशत छात्र सरकारी प्राथमिक स्कूलों पढ़ते थे, जबकि २०१४ में इनकी संख्या घटकर ६२ प्रतिशत हो गई । इसी तरह उच्च प्राथमिक सरकारी स्कूलों में २००७-०८ में छात्रों का प्रतिशत ६९.९ था, जो २०१४ में घटकर ६६ हो गया । यह आंकड़ा निजी स्कूलों की ओर बढ़ते रुझान का संकेत कर रहा है । ऐसा इसलिए हो रहा है, क्योंकि भारतीयों में पढ़ाई के प्रति पहले से ज्यादा जागरूकता आई है । अब वे अपने बच्चों को अच्छी से अच्छी शिक्षा देना चाहते हैं और इसके लिए अपनी जेब भी ढीली करने को तैयार हैं । आज न केवल मध्यवर्ग, बल्कि सामान्य अभिभावक भी अपने बच्चों की शिक्षा के लिए प्राइवेट स्कूलों को प्राथमिकता देने लगा है और अपने सामर्थ्य अनुसार वह इसकी फीस चुकाने को तैयार है । दरअसल, पिछले कुछ दशकों से इस बात को बहुत ही सुनियोजित तरीके से स्थापित करने का प्रयास किया गया है कि सरकारी स्कूल तो नाकारा हैं । अगर अच्छी शिक्षा लेनी है तो प्राइवेट की तरफ जाना होगा । जब जबकि सरकारी स्कूल को मजबूरी के विकल्प बना दिए गए हैं, उन्हें इस लायक नहीं छोड़ा गया है कि वे उभरते भारत की शैक्षणिक जरूरतों को पूरा कर सकें । इन परिस्थितियों ने भारत में स्कूल खोलने और चलाने को एक बड़े उद्योग के रूप में विकासित किया है और इसका लगातार विस्तार हो रहा है । इसलिए हम देखते हैं कि एक तरफ तो गांव-गली में एक और दो कमरों में चलने वाले स्कूल खुल रहे हैं तो दूसरी तरफ इंटरनेशनल स्कूलों का चलन भी तेजी से बढ़ रहा है । एक अनुमान के मुताबिक, आज हमारे देश में ६०० से ज्यादा इंटरनेशनल स्कूल चल रहे हैं । हमारे देश का नवधनाढ्य तबका इन स्कूलों में अपने बच्चों को बढ़ाने के लिए मुंहमांगी फीस देने को तैयार है । यह चलन हमारे देश में पहले से ही शिक्षा की खाई को और चौड़ा कर रहा है । बहुत ही बारीकी से शिक्षा जैसे बुनियादी जरूरत को एक कमोडिटी बना दिया गया है, जहां आप अपने सामर्थ्य के अनुसार बच्चों के लिए शिक्षा खरीद सकते हैं, यह विकल्प हजारों से लेकर लाखों रुपए तक का है । सरकारी स्कूलों की उपेक्षा और प्राइवेट स्कूलों की लगातार बढ़ती फीस ने अभिभावकों के लिए इस समस्या को और गंभीर बना दिया है । आज किसी साधारण माता-पिता के लिए अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा दिलाना बहुत मुश्किल साबित हो रहा है । व्यापारिक संगठन एसोचैम द्वारा जारी एक अध्ययन के अनुसार, बीते दस वर्षों के दौरान निजी स्कूलों की फीस में लगभग १५० फीसदी बढ़ोतरी हुई है । आज लखनऊ, भोपाल, पटना, रायपुर जैसे मझोले शहरों में किसी ठीक-ठाक प्राइवेट स्कूल की प्राथमिक कक्षाओं की औसत फीस एक हजार से लेक ६ हजार रुपए प्रति माह है । इसके अलावा अभिभावकों को प्रवेश शुल्क परीक्षा/टेस्ट शुल्क, गतिविधि शुल्क, प्रोसेसिंग फीस, रजिस्ट्रेशन फीस, एलुमिनि फंड, कंप्यूटर फीस, बिल्डिंग फंड, कॉशन मनी, एनुअल तथा बस फीस जैसे कई तरह के शुल्क हैं, जो वसूले जाते हैं । एक अनुमान के मुताबिक, मासिक फीस के अलावा तमाम तरह के शुल्क के नाम पर अभिभावकों के अलावा तमाम तरह के शुल्क के नाम पर अभिभावकों को ३० हजार से लेकर सवा लाख रुपए तक चुकाना पड़ता है । इसके अतिरिक्त बच्चों की ड्रेस, किताब-कापियां और स्टेशनरी पर भी अच्छा-खासा खर्च करना होता है । निजी स्कूल की मनमानी इस हद तक है कि एडमिशन के समय अभिभावकों को बुक स्टोर्स और यूनिफार्म की दुकान का विजिटिंग कार्ड देकर वहीं से किताबें, यूनिफार्म और स्टेशनरी खरीदने को मजबूर किया जाता है । ये दुकानें अभिभावकों से मनमाना दाम वसूलती हैं । इसी तरह से सिलेबस को लेकर भी गोरखधंधा चलता है ।

कई स्कूल संचालक एक ही क्लास की किताब हर साल बदलते हैं, हालांकि सेलेबस वही रहता है, लेकिन इस काम में उनकी और प्रकाशकों की मिलीभगत होती है, इसलिए एक प्रकाशक किताब में जो चैप्टर आगे रहता है, दूसरा उसे बीच में कर देता है । इन सबके बावजूद ज्यादातर सूबों में निजी स्कूलों में फीस के निर्धारण के लिए फीस नियामक नहीं बने हैं या सिर्फ कागजों में हैं । निजी स्कूलों में कितनी फीस वृद्धि हो या कितनी फीस रखी जो, इस संबंध में कोई स्पष्ट दिशा-निर्देश नहीं हैं और जहां हैं, वहां भी इसका पालन नहीं किया जा रहा है । इसलिए कई स्कूल से हर साल अपने फीस में १० से २० फीसदी तक की वृद्धि कर देते हैं । लंबे-चौड़े दावों के बावजूद ज्यादातर निजी स्कूल शिक्षा प्रणाली के मानक नियमों को ताक पर रखकर चलाए जा रहे हैं । अधिकतर निजी स्कूल ऐसे हैं, जो एक या दो कमरों में संचालित हैं, यहां पढ़ाने वाले शिक्षक पर्याप्त योग्यता नहीं रखते हैं । शिक्षा का अधिकार यानी आरटीई कानून

प्राइवेट स्कलों को अपने यहां २५ प्रतिशत गरीब बच्चों को दाखिला देने के लिए बाध्य करता है, साथ ही यह शर्त रखता है कि अगर आपको स्कूल खोलना है तो अधोसंरचना आदि को लेकर कुछ न्यूनतम शर्तों को पूरा करना होगा, जैसे प्राइमरी स्कूल खोलने के लिए ८०० मीटर और मिडिल स्कूल के लिए १००० मीटर जमीन की अनिवार्यता रखी गई है । यह नियम ज्यादातर प्राइवेट स्कूलों को भारी पड़ रहा है और अगर इस नियम का कड़ाई से पालन किया जाए तो लाखों की संख्या में प्राइवेट स्कूल बंद होने के कगार पर पहुंच जाएंगे । इसलिए सेंटर फॉर सिविल सोसायटी जैसे पूंजीवाद के पैरोकार समूहों द्वारा आरटीई के नियमों में ढील देने की मांग को लेकर अभियान चलाया जा रहा है । भारत में शिक्षा व्यवस्था गंभीर रूप से बीमार है, इसकी जड़ में हितों का टकराव ही है । प्राथमिक शिक्षा स लेकर कॉलेज शिक्षा तक पढ़ाई के अवसर सीमित और अत्यधिक महंगे होने के कारण आम आदमी की पहुंच से लगभग दूर होते जा रहे हैं ।

शिक्षा के इस माफिया तंत्र से निपटने के लिए साहसिक फैसले लेने की जरूरत है । हालात अभी भी नियंत्रण से बाहर नहीं हुए हैं और इसमें सुधार संभव है । करना बस इतना है कि सरकारें सरकारी स्कूलों के प्रति अपना रवैया सुधार लें, वहां, बनियादी सुविधाएं और पर्याप्त योग्य शिक्षक उपलब्ध करा दें, जिनका मूल काम पढ़ाने का ही हो तो सरकारी स्कूलों की स्थिति अछूतों जैसी नहीं रह जाएगी और वे पहले से बेहतर नजर आएंगे, हां बच्चों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा मिल सकेगी और समुदाय का विश्वास भी बनेगा। अगर सरकारी स्कूलों में सुधार होता है तो इससे शिक्षा के निजीकरण की प्रक्रिया में कमी आएगी ।

इसी तरह से बेलगाम व नियंत्रण से बाहर प्राइवेट स्कूलों पर भी कड़े नियंत्रण की जरूरत है, जिस तरह से वे हैं और लगातार अपनी फीस बढ़ाते जा रहे हैं, उससे इस बात का डर है कि कहीं शिक्षा आम लोगों की पहुंच से बाहर न चली जाए । हालत पर काबू पाने के लिए केंद्र और राज्य सरकारों को ठोस कदम उठाने की जरूरत है । लेकिन समस्या यह है कि राजनेता और प्रभावशाली वर्ग शिक्षा के इस व्यवसाय में संलिप्त हैं, ऐसे में उनसे किसी बड़े कदम की उम्मीद कैसे की जाए ।

पृष्ठ १० का शेष....

काफी युवाओं के पाक की खुफिया एजेंसी आइएँआइ और कुख्यात आतंकी संगठन आइएस के सपर्क में होने की बातें सामने आती रहती हैं ।

सोचने की जरूरत है कि आतंक से प्रभावित कौन हो रहा है ? हर आतंकी हमले में या तो सैनिक मरते हैं या फिर निर्दोष जनता । परेशानी भी इन्हीं लोगों को होती है । आतंकी संगठनों के सरगना हों या फिर इस व्यवस्था को जन्म देने वाले राजनेता या फिर हमलों के जिम्मेदार लोग, उनका कुछ खास नहीं बिगड़ता । इस समय देश में उकसावे की प्रवृत्ति हावी है । युद्ध के मामले में बड़े स्तर पर मंथन की जरूरत है । चीन के साथ हुआ १९६२ का युद्ध, १९६५ में पाकिस्तान से हुआ युद्ध हो या फिर १९७१ का या फिर कारगिल का, इन युद्धों के जिम्मेदार लोगों का क्या बिगड़ा ? कौन मरा, कौन प्रभावित हुआ ? ताशकंद समझौते के तहत हमें पीछे हटने को मजबूत करने वाला कौन था । कारगिल में बंधक बनाए गए पाकिस्तानी सैनिकों को छुड़वाने वाला कौन था । का फैसला लेने से पहले अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मिलने वाले समर्थन पर भी सोचना होगा । मिलेगा तो किस हद तक। बांग्लादेश, भूटान और अफगानिस्तान ने एक तरह से भारत को समर्थन दे दिया है । चीन ने पाकिस्तान में मोटा निवेश कर रखा है, तो उसका रुख पाकिस्तान के पक्ष में होना स्वभाविक है । हां, इन हालात में चीन युद्ध कभी नहीं चाहेगा । वह भी दोनों देशों से संवाद प्रक्रिया को आगे बढाने की बात कर रहा है । आज प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा के खास बने हुए हैं, पर क्या अमेरिका भारत का हो सकता है ? या कभी हुआ है ? अक्सर देखा गया है कि अमेरिका पाक मामले में भारत के साथ राजनीति ही करता आया है । वह भारत को आतंकी हमले के प्रति सचेत भी करता है और पाकिस्तान को हथियार भी देता है । देखना यह भी होगा कि आतंकवाद से प्रभावित पाकिस्तान तो अपना सब कुछ खो चुका है, पर भारत के पास खोने के लिए बहुत कुछ है । युद्ध होने पर आतंकवादियों का ध्यान पाक पर न रह कर भारत की ओर हो जाएगा । संयुक्त राष्ट्र महासभा में जिस तरह नवाज शरीफ ने बुरहान को हीरो के रूप में पेश किया, वह आतंकियों को खुश करने का प्रयास था। जनता और आतंकियों का रुख भारत की ओर करने के लिए नवाज शरीफ खुद माहौल को गरमाने में लगे हैं

हम लोग भले आतंकवादियों को मार कर वाहवाही लूटने का प्रयास करते हों, पर सोचने की बात है कि ये लोग तो आते ही मरने और मारने के लिए हैं । विचार करने की बात यह भी है कि इन लोगों को सैनिक शिविरों की आंतरिक जानकारी कैसे मिलती है ? क्या सुरक्षा की दृष्टि से बनाए गए हमारे तत्र भ्रष्टाचार के चलते लगातार कमजोर नहीं हो रहे हैं ? सोशल मीडिया में भले युद्ध करने के लिए अभियान चला दिया गया हो, पर क्या आज के दौर में युवाओं का सेना से मोहभंग नहीं हो रहा है? कितने माता-पिता हैं, जो अपने बच्चों को देश के लिए मरने-मिटने के लिए प्रेरित करते हैं । कितने लोग हैं, जो युद्ध के बाद उत्पन्न होनी वाली परेशानियों से बिल-बिलाएंगे नहीं । निश्चित रूप से हमारे सैनिकों की शहादत का बदला लिया जाए, पर ठंडे दिमाग से । युद्ध से पहले श्रीनगर और कश्मीर की स्थिति भी देखना जरूरी है जहां पर लंबे समय से कर्फ्यू चल रहा है और स्वाभाविक ही सेना और सरकार के प्रति वहां के लोगों में गुस्सा है । युद्ध के समय इनकी प्रतिक्रिया दिक्कत बढाने वाली होगी । इतिहास से सबक लेते हुए विश्व की उभरती दो शक्तियों- भारत और चीन को मिल कर यूरोप की राजनीति और कूटनीति को समझना होगा । यूरोप का पिछलग्गू होने के बजाय एशिया के देशों को एकजुट होना होगा । हमें समझना होगा कि अमेरिका के नाम का दबाव तो बना सकते हैं पर संबंधों के मामले में वह न कभी भारत का हुआ है और न कभी होगा ।

महर्षि दयानन्द निर्वाण दिवस पर

'ऋषि दयानन्द के बलिदान व महाप्रयाण की कारुणिक कथा'

-मनमोहन कुमार आर्य

ऋषि दयानन्द जी का जीवन गुणों व कार्यों की दृष्टि से जितना सर्वांगपूर्ण और शिक्षाप्रद है उतनी ही उनकी मृत्यु भी आदर्श है। कार्तिक अमावस्य के दिन अजमेर नगर में उनका बलिदान व महाप्रयाण हुआ। स्वामी जी को जोधपुर प्रवास में विष दिया गया था। इससे पूर्व भी अनेकों बार उन्हें विष दिया गया। पूर्व के सभी अवसरों पर वह यौगिक एवं अन्य क्रियों द्वारा विष का प्रभाव समाप्त करने में सफल रहते थे। ऋषि दयानन्द जोधपुर वहां के राजा जसवन्त सिंह व उनके अनुज महाराज प्रतापसिंह के निमंत्रण पर गये थे और वहां राज्य के अतिथि थे। विष दिये जाने के बाद वहां उनका समुचित उपचार व चिकित्सा नहीं हुई। उनकी शारीरिक स्थिति अत्यन्त निराशाजनक हो जाने पर उन्हें वहां से आबूरोड और उसके बाद आबूरोड से अजमेर लाया गया जहां उनका दीपावली **३० अक्टूबर सन् १८८३ को सायं ६.०० बजे बलिदान हुआ**। उनकी मृत्यु के दिन वृतान्त हम उनके एक जीवनीकार एवं शिष्य सत्यानन्द जी के शब्दों में वर्णन कर रहे हैं।

स्वामी सत्यानन्द जी लिखते हैं कि कार्तिक अमावस्य कृष्मा १४ को महाराज के शरीर पर नाभि तक छाले पड़ गये थे, उनका जी घबराता था, गला बैठ गया था। श्वास-प्रशवास के वेग से उनकी नस-नस हिल जाती थी। सारी देह में दाह-सी लगी हुई थी। परन्तु वे नेत्र मूंदकर ब्रह्मध्यान में वृत्ति चढ़ाये हुये थे। अजान लोग उनकी इस ध्यानावस्था को मूर्छा मान लेते थे। जब शरीर अपने व्यापार से शिथिल हो जाय और बोलने आदि की शक्ति भी मन्द पड़ जाय तो सभी सन्तजन मनोवृत्तियों को मूर्छित करके निमग्नावस्था में चले जाया करते हैं।

कार्तिक अमावस्य मंगलवार (३० अक्टूबर १८८३) दीपमाला के दिन, सबेरे, विदेशी बड़ा डाक्टर न्यूटन महाशय आया। उसने उनके रोग-भोग की अवस्था देखकर आश्चर्य से कहा कि ये बड़े साहसिक और सहनशील हैं। उनकी नस-नस और रोम-रोम में रोग का विषैला कीड़ा घुसकर कुलबुलाहट कर रहा है परन्तु वे प्रशान्तचित हैं। इनके तन पिंजर को महाव्याधि की ज्वाला-जलन जलाये चली जाती है जिसे दूर से देखते ही कंपकंपी छूटने लगती है। पर ये हैं कि चुपचाप चारपाई पर पड़े हैं। हिलते-डुलते तक नहीं। रोग मेंजीते रहना इन्हीं का काम है। भक्त लक्ष्मणदास ने उनसे कहा कि महाशय ये महापुरुष स्वामी दयानन्द जी हैं।

यह सुनकर डॉक्टर महाशय को अत्यधिक शोक हुआ। महाराज ने उस बड़े वैद्य के प्रश्नों का उत्तर संकेतमात्र से दिया। एक मुसलमान वैद्य, पीरजी, बड़े प्रसिद्ध थे। वे भी उनको देखने आये। उन्होंने आते ही कह दिया **'उनको किसी ने कुलकण्टक विष देकर अपनी आत्मा को कालख लगाई है। इनकी देह पर सारे चिन्ह विष-प्रयोग-जन्य दिखाई देते हैं।'** पीर जी ने भी महाराज का सहन सामर्थ्य देख दांतों में उगली दबाते हुए कहा, धैर्य का ऐसा धनी, धरणी-तल पर हमने दूसरा नहीं देखा। इस प्रकार राजवैद्यों और भक्जनों के आते जाते दिन के ग्यारह बजने लगे। रोगी का सांस अधिक फूलने लगा। वे हाँफते तो बहुत थे परन्तु बोलने की शक्ति कुछ लौट आई थी। उनका कण्ठ खुल गया था। इससे प्रेमियों के मुखमण्डों पर प्रसन्नता की रेखा खेलने लगी। परन्तु पीछे जाकर उन्हें पता चला कि वह तो दीपक-निर्वाण की अन्तिम प्रदीप्ति थी। सूर्यास्त का उजेला था। महाराज ने उस समय सौच होने की इच्छा प्रकट की। चार भक्तों ने उन्हें हाथों पर उठाकर शौच होने की चैकी पर बिठा दिया। निवृत्त होकर वे फिर भली भांति शुद्ध हुए और आसन पर विराजमान हुए।

उस समय स्वामी जी ने कहा कि आज इच्छानुकूल भोजन बनाइए। भक्तों ने समझा कि भगवान आज अपेक्षाकृत कुछ स्वस्थ हैं, इसलिए अन्न ग्रहण करना चाहते हैं। ये थाल लगाकर श्री महाराज के सामने ले गये। स्वामी जी ने टुक देखकर कहा कि अच्छा, इसे ले जाइए। अन्त में प्रेमियों की प्रार्थना पर उन्होंने चनों के झोल का एक चमचा ले लिया फिर हाथ मुंह धोकर भक्तों के सहारे वे पलंग पर आ गये। शरीर की वेदना वराबर ज्यों की त्यों बनी हुई थी। श्वास रोग का उपद्रव पूरे प्रकोप पर पहुंच चुका था। पर वे शिष्य-मण्डली से वार्तालाप करते और कहते थे कि एक मास के अनन्तर आज स्वास्थ्य कुछ ठीक हुआ है। बीच-बीच में जब वेदना का वेग कुछ तीव्र हो जाता तो वे आंखे बन्दकर मौन हो जाते। उस समय उनकी वृत्ति स्थूल शरीर का सम्बन्ध छोड़ देती- आत्माकारता को लाभ कर लेती।

इसी प्रकार पल विपल बीतते सांझ के चार बजने को आये। भगवान ने नाई को बुलाकर क्षौर करने को कहा। लोगों ने निवेदन किया कि भगवान् उस्तरा न फिराइए। छालें फुंसियां कटकर लहू बहने लगेगा, परन्तु उन्होंने कहा कि इसकी कोई चिन्ता नहीं है। क्षौर कराकर उन्होंने नख उतरवाए। फिर गीले तौलिये से सिर को पोंछकर सिहारने के सहारे पलंग पर बैठ गये। उस समय श्री महाराज ने आत्मानन्द जी को प्रेम से आहूत किया। जब आत्मानन्द जी को प्रेम से आहूत किया। जब आत्मानन्द जी हाथ जोड़कर सामने आ खड़े हुए तो कहा- वत्स, मेरे पीछे बैठ जाओ। गुरुदेव का आदेश पाकर वे सिराहने की ओर, तकिये के पास प्रभु की पीठ थामकर विनय से बैठ गये।

महाराज ने अतीव वत्सलता से कहा- वत्स, आत्मानन्द, आप इस समय क्या चाहते हैं ? महाराज ने वचन सुनकर आत्मानन्द जी

का हृदय भर आया । उनकी आंखों से एकोक आंसुओं की लड़ी टूट पड़ी । गद्‌कद् गले से आत्मानन्द जी ने वसीभूत निवेदन किया कि यह तुच्छ सेवक रात-दिन प्रार्थन करता है कि परमेश्वर अपनी अपार कृपा से श्रीचरणों को पूर्ण स्वास्थ्य प्रदान करें । इसे इससे बढ़कर त्रिभुवन भर में दूसरी कोई वस्तु प्रिय नहीं है ।

महाराज ने हाथ बढ़ाकर आत्मानन्द जी के मस्तक पर रखा और कहा- वत्स, इस नाशवान् नाशवान् क्षणभंगुर शरीर को कितने दिन स्वस्थ रहना है । बेटा अपने कर्त्तव्य कर्म का पालन करते हुए आनन्द से रहना । घबराना नहीं । संसार में संयोग और वियोग को होना स्वाभाविक है । महाराज के इन वचनों को सुनकर आत्मानन्द जी सिसक कर रोने लगे । गुरु वियोग-वेदना को अति समीप खड़ा देखकर उनका जी शोक-सागर के गहरे तल में डूब गया ।

गोपालगिरी नाम के एक संन्यासी भी कुछ काल से श्रीचरण-शरण में वास करते थे । महाराज ने उनको आमंत्रित करके कहा कि आपको कुछ चाहिए तो बता दीजिए । उन्होंने भी यह विनय की कि भगवन् हम लोग तो आपका कुशल-क्षेम ही चाहते हैं । हमें सांसारिक सुख की कोई भी वस्तु नहीं चाहिए । फिर महाराज ने दो सौ रुपये और दो दुशाले मंगाकर भीमसेन जी और आत्मानन्द जी को प्रदान किये । उन दोनों ने अश्रुधारा बहाते, भूमि पर सिर रखकर, वे वस्तुयें लौटा दी । वैद्यवर भक्तराज श्री लक्ष्मणदास जी को भी भगवान् ने कुछ द्रव्य देना चाहा, परन्तु उन्होंने द्रवीभूत हृदय से कर जोड़कर लेने से इनकार कर दिया ।

इस प्रकार अपने शिष्यों से गुरु महाराज की विदा होते देखकर आर्यजनों के चित्त की चंचलता और चिन्ता की प्रचण्डता चरम सीमा तक पहुंच गई । वे बड़ी व्याकुलता से सामने आ खड़े हुए । उस समय, श्री स्वामी जी अपने दोनों नेत्रों की ज्योति सब बन्धुओं के मुखमण्डलों पर डालकर, एक नीरव पर अनिर्वचनीय स्नेह-संताप सहित, उनसे अंतिम बिदाई लेने लगे । उनके प्रेम पूर्ण नेत्र, अपने पवित्र प्रेम की सुपात्रों को धैर्य देते और ढाढस बंधाते प्रतीत होते थे । महाराज प्रसन्न-चित्त थे । उनके मुख पर घबराहट का कोई भी चिन्ह परिलक्षित नहीं होता था ।

परन्तु भक्त जनों की आशायें क्षण-क्षण में निराशा निशा में लीन हो रही थी । उनके उत्साह की कोमल कलियों के सुकोमल अंग पल-पल में भंग हु चले जाते ते । वे गुरुदेव की दैवी देह के देव दुर्लभ दर्शन पा तो रहे थे, परन्तु उनकी आंखों के आगे रह-रह कर आंसुओं की बदलियाँ आ जाती थीं । रुलाई का कुहरा छा जाता था । सर्वत्र निविड़ तमोराशि का राज्य दिखाई देने लगता था । वे जो (अपने मन व चित्त) को कड़ा किये कलेजा पकड़ कर खड़े तो थे, परन्तु खोखले पेड़ और भुने हुए दाने की भांति, मानो सत्व रहित थे ।

ऐसी दशा ही में सायंकाल के पांच बजने लगे । उस समय एक भक्त ने पूछा कि भगवन्, आपकी प्रकृति कैसी है । श्री महाराज ने उत्तर दिया कि अच्छी है, प्रकाश और अन्धकार का भाव है । इन्हीं बातों में जब साढ़े पांच बजे तो महाराज ने सब द्वार खुलवा दिये । भक्तों ने अपनी पीठ के पीछे खड़े होने का आदेश दिया । फिर पूछा कि आज पक्ष, तिति और बार कौन सा है । पण्ड्य मोहनलाल ने शिरोनत होकर निवेदन किया कि प्रभो, कार्तिक कृष्ण पक्ष का पर्यवसान और शुक्ल का प्रारंभ है । अमावस्य और मंगलवार है । तत्पश्चात् महाराज ने अपनी दिव्य दृष्टि को उस कोठरी के चहुं ओर घुमाया और फिर गंभीर ध्वनि से वेद-पाठ करना आरम्भ कर दिया । उस समय उनके गले में उनके स्वर में, उनके उच्चारण में, उनकी ध्वनि में, उनके शब्दों में किंचिन्मात्र भी निर्बलता प्रतीत नहीं होती थी ।

भगवान् ने होनहार भक्त, पण्डित श्री गुरुदत्त जी उस कमरे में एक कोने में भित्ति के साथ लगे हुए, भगवान् की भौतिक दशा के अन्त का अवलोकन कर रहे थे । टकटकी लगाये लगाये निर्निमेष नेत्रों से उनकी ओर देख रहे थे । पण्डित महाशय उस धर्मावतार के दर्शन करने पहले पहल ही आये थे । उनके अन्तःकरण में अभी आत्म-तत्व का अंकुर पूर्ण रुप से नहीं निकला पाया था । परन्तु श्रीमहाराज की अन्तिम दशा को देखकर वे अपार आश्चर्य से चकित हो गये । वे चैकसाई विचार से देख रहे थे कि मरणासन्न महात्मा के तन पर अगणित छाले फूट निकल हैं, उनको विषम वेदना व्यथित किये जाती है । उनकी देह को दावानल सदृश दाह-ज्वाला एक प्रकार से दग्ध कर रही हैं । प्राणान्तकारी पीड़ा उनके सम्मुख उपस्थित है । परन्तु महात्मा शान्त बैठे हैं । दुःखक्लेश का नाम-निर्देश तक नहीं करते । उलटे गंभीर गर्जना से वेद-मन्त्र गा रहे हैं । उनका मुख प्रसन्न है । आंखे कमल सदृश खिल रही है । व्याधि मानों उनके लिए त्रिलोकी में त्रयकाल, उत्पन्न ही नहीं हुई । यह सहनशीलता शरीर की सर्वथा नहीं है, अवश्यमेव यह इनका आत्मिक बल है ।

यह पहला पल था कि जिस महर्षि की मृत्यु की अवस्था देखकर श्रीगुरुदत्त जैसे धुरन्धर नास्तिक के हृदय की अपजाउ भूमि में आत्मिक जीवन की जड़ लग गी । इन भावों की विद्युत रेखा चमकते ही वे सहसा चौंक पड़े । उन्होंने क्या देखा कि एक ओर तो परमधाम के पधारने के लिए प्रभु परमहंस पलंग पर बैठे प्रार्थना कर रहे हैं और दूसरी ओर वे, व्याख्यान देने के वेश में सुसज्जित, उसी कमरे की छत के साथ लगे बैठे हैं । इस आत्म योग के प्रत्यक्ष प्रमाण को पाकर पण्डित महाशय का चित्तस्फटिक, आस्तिक भाव की प्रभा से चमचमा उठा । मानों एक ओर से निकलती हुई उनकी देह के दीप में प्रवेश कर गई ।

गुरुदत्त अपनी गुप्त रीतियों से आत्मदाता गुरुदेव को फिर अतिशय श्रद्धा से देखने लगे । भगवान् वेद गान के अनन्तर, परम-प्रीति से पुलकित अंग होकर, संस्कृत शब्दों में परमात्मदेव की प्रार्थना करने लगे । फिर आर्य भाषा में ईश्वर गुण गाते भक्तों की परम गति भगवती गायत्री को जपने लगे । उस महामन्त्र के पुण्यपाठ को करते करते मौन हो गये । और चिरकाल तक सुवर्णमयी मूर्ति की भांति निश्चल रुप से समाधिस्थ बैठे रहे । उस समय उनके स्वर्गीय मुख

मण्डल के चारों ओर सुप्रसन्नता प्रभात की झलमलाहट पूर्ण रूप से झलमल कर रही थी।

समाधि की उच्चतम भूमि से उतर कर, भगवान् ने दोनों नेत्रों के पलक-कपाट खोलकर, दिव्य ज्योति का विस्तार करते हुए कहा-''**हे दयामय, हे सर्व शक्तिमान् ईश्वर, तेरी यही इच्छा है। सचमुच, तेरी यही इच्छा है। परमात्मदेव तेरी इच्छा पूर्ण हो। अहा ! मेरे परमेश्वर, तैने इच्छी लीला की।**'' इन शब्दों का उच्चारण करते ही, ब्रह्म ऋषि ने आत्मिक प्राण को ब्रह्माण्ड द्वारा परमधाम को जाने के लिये स्वर्ग-सोपान पर आरूढ़ किया और तत्पश्चात् पव रुप प्राण को कुछ पल भीतर रोक कर प्रणवनाद के साथ बाहर निकाल दिया। उसे सूत्रात्मा वायु में लीन कर दिया।

प्रभु के स्थूल प्राण के निकलने के साथ ही उपस्थित सेवकों की अश्रुधारायें अनर्गल हो गई। अनाथ बालकों की भांति, भक्तजनों ने रो रोकर कमरे की भूमि को, भिगो दिया। उनके दुःख का, उनके क्लेश का, उनकी निराशा का, उनके शोक का, कोई पारावार न रहा। सबके हृदय इस दारुण दुःख से विदीर्ण हो गये। वे बहुतेरा थमाते पर उनका कलेजा बार-बार मुंह को आता था। वे धैर्य धारण करने की चेष्टा भी करते पर चित्त चकनाचूक ही हु चला जाता था। फूट-फूटकर रोते उनकी आंखे फूल गई। घिग्घिया बंध गई। व्याकुलकता वेग ने उनको शोक के अति गहरे सागर में डुबो दिया। आर्त भारत के भाग्य का भानु, भगवान् दयानन्द, कार्तिक अमावस्य सम्वत् विक्रमी, मंगलवार को सायं छः बजे एकोक, काल कराल रुप अस्तांचल की ओट में हो गया। उस समय सूर्यदेव भी अस्त हो गये थे। तपोमयी महा तमिस्रा रजनी ज्यों-ज्यों घोरतरुप धारण करती जाती थी, त्यों-त्यों अजमेर के तार-घर से दौड़ते हु तार आर्यसंसार में निराशा की, अतिशोक की और असह्य विपत्ति वज्रपात की घोरतम तमोराशि की निपट निशा का विस्तार कर रहे थे।

महाराज के निर्वाण का अचानक समाचार पाकर आर्यों के चित्त चौंक पड़े, चंचल हो उठे, उनके सिर पर दुःखरुप पर्वत-शिखर का सहसा विनिपात हो गया। उस समय आर्यजनों की आंखे गंगा-यमुना की भांति बड़े वेग से बह रही थी। उनके हृदय अस्त-व्यस्तता में व्याकुल हो रहे थे। मन गहरे खेद की खाई में गिरकर खिन्नावस्था में खण्ड-खण्ड हु जाते थे। उनकी आत्मायें इतनी अधीर हो गई थीं कि उनको एक-एक पल द्रौपदी के चीर के समान दिखाई देता था और व रात्रि काल-निशा सदृश जान पड़ती थी।

जिस प्रकार श्रीराम के वियोग से भरत जी व्याकुल हो उठे थे और कृष्ण के निर्वाण पर ऊधव जी तथा पाण्डवों ने करुण-क्रन्दन किया था, उसी प्रकार भगवान् दयानन्द के स्वर्ग सिधारने पर आर्यसमाजियों में अनवरत आर्त-नात होने लगा। उनके मध्यान्ह के सूर्य की प्रखर किरणों पर अकस्मात् काल-कालिमा छा गई। शरत्पूर्णिमा के शुभ्र ज्योत्सना-युक्त चन्द्रमा पर पृथ्वी की छाया पड़ गई। उनकी उन्नति और उदय के बाल-रवि को राहु ने सहसा ग्रास लिया। हरित, भरित, पुष्पित और फलित आर्यसमाज वाटिका पर परुष-पाषाण राशि को भी तुषार रुप में परिणत करने वाला, भीषण तुषारपात हो गया। प्रसन्नता पर खिन्नता की झलक आ गई। चारु-प्रेम-प्रतिमा अकाल ही में सामने से उठा ली गई। उनकी सुविमल, सुशीतल, सुवासित, सुकोमल चित्तकलियों को काल की लू के झकोले ने जहां-तहां से झुलस दिया। वे गुरु वियोग व्यथा से विह्वल हो, बिलख-बिलख कर सोद्न करते थे।

आगामी दिन के समाचार पत्रों ने शोक-सूचक काली रेखा देकर अपने स्तम्भों के स्तम्भ इस शोक समाचार पर लिखे, जिससे पूर्व से पश्चिम और उत्तर से दक्षिण पर्यन्त भारत भर में भगवान् के असामयिक स्वर्गारोहण का शोक छा गया। नगर नगर में लोगों ने सभायें लगाकर इस अति भारी क्षति और धर्महानि पर आंसू बहाये। इस सार्वभौम शोक में अमेरिका और यूरोप के देश भी सम्मिलित हुए।

कार्तिक शुक्ल प्रतिप्रदा को, प्रातःकाल भक्तजल भगवान् की जीवनज्योति विहीन, निर्जीव देह-दीवट को उठाकर स्नान कराने लगे। वे चाहते थे कि महाराज के शरीर पर केवल सुशीतल जल ही पड़े, परन्तु बलात्कार उनके आंसू बराबर, टपटप करके टपक पड़ते थे। स्नान कराने के उपरान्त महाराज की देह को चन्द्रादि सुगन्धित वस्तुओं से चर्चित किया गया। फिर उसे बहुमूल्य वस्त्रों में वेष्टित करके, पलंग पर प्राण-त्याग आसन में स्थापित किया गया। उस समय सैकड़ों मनुष्य उनके अन्तिम दर्शनों के दौड़े आकर, अपने नेत्रों की सहस्र धाराओं से उस कोठरी की भूमि को भिगोते थे। भक्तजन विमान बनाने लगे तो पण्ड्या मोहनलाल जी ने भातृ मण्डल के सामने निवेदन किया है कि- श्रीमन्नमहाराणा श्री सज्जनसिंह जी ने मुझे चलते समय आदेश दिया था कि यदि हम लोगों के दुर्भाग्य से महाराज का शरीर छूट जो, तो किसी प्रकार तीन चार दिन पर्यन्त उसका दाह-कर्म न किया जाय, जिससे मैं और उनके दूसरे शिष्य राजे महाराजे उनके अन्तिम दर्शन पा सकें, उनके दाह-कर्म में सम्मिलित हो सकें। परन्तु प्रभु के उपस्थित प्रेमियों ने दाह कर्म उसी दिन कर देना ही उचित समझा। शिविका पुष्पों, कदली स्तम्भों और कोमल पत्तों से सुसज्जित की गई, दिन के दस बजे महाराज की अरथी उठाई गई। उस समय सैकड़ों सज्जन नंगे पांव उसके पीछे चलते थे। राय भागराम भी नंगे पांव साथ थे। महाराज के, शिविका में पड़े शव को पंजाबी सैनिक अपने बलिष्ठ कन्धों पर उठाये वहन कर रहे थे। रामानन्द जी और गोपाल गिरी जी आदि आगे-आगे वेद पाठ करते चलते थे। अजमेर नगर के आगरा द्वार से होते हुए बाजारों और चौकों का उल्लंघन करते नगर से बाहर दक्षिण भाग में शिविका पहुंचाई गई।

वेदी बनने में कुछ देर जानकर पण्डित भागराम जी ने आर्यों के डांवाडोल मनो को धैर्य बंधाते हुए स्वर्गीय स्वामी जी के गुण-कीर्तन किये। उनके उपकार बताये और स्वामी जी के उद्देश्यों की परिपूर्ति के लिए स्वामी भक्तों को प्रोत्साहन दिया। यद्यपि पंडित महाशय का कण्ठ बीच-बीच में वाष्प

से बराबर रुक जाता था, फिर भी उन्होंने यथा तथा करके अपना हार्द प्रकाशित कर ही दिया ।

तत्पश्चात् राव बहादुर पण्डित सुन्दरलाल जी कलेजे को कड़ा करके कथन करने लगे । परन्तु उनके दोनों नेत्रों से बहते हुए अश्रुओं ने उनके वक्षः स्थल को गीला कर दिया, उनका गला इतना रुक गया कि वे आगे कुछ भी न बोल सके । वेदी बन जाने पर भक्त लोगों ने दो मन चन्दन और दस मन पीपल की समिधों से चिता चयन की । अपने टूक-टूक होते हृदयों को थाम कर उन्होंने गुरुदेव के शव को उस अन्तिम शय्या पर शयी कर दिया । रामानन्द और आत्मानन्द जी ने यथाविधि अग्न्याधान किया । अग्निस्पर्श होते ही घृतसिंचित चिता, ज्वाला-माला से आवृत्त हो गई । उस दाह-कुण्ड में चार मन घी, पांस सेर कपूर, एक सेर केसर और दो तोले कस्तूरी डाली गई । चरु और घृत की पुष्कल आहुतियों से हुत श्री महाराज का शव प्रेमियों के नीर भर नेत्रों से देखते ही देखते अपने कारणों में लय हो गया । महाराज की आत्मा तो जागतिक ज्योति में पहिले ही लीन चुकी थी । सेवकों ने उनके शरीर को भी ज्योतिः शय्या पर आरूढ़ करके उसके तातत्विक रुप में पहुंचा दिया । गुरु महाराज की दुर्लभ देह का कर्म करने के अन्तर, अति शोकातुर आय्यजन नगर को लौट आये । उस दिन वे अपने को निःसार और निःसत्व समझते थे, प्रत्येक कार्य में अनमने से हो रहे थे । अपने अति प्यायों को भी देखकर उनकी प्रसन्नता नहीं होती थी । उनको अपने देह के दीवट पर धरा हुआ मन का दीवा प्रसन्नता की ज्योति से सर्वथा शून्य जान पड़ता था । इस प्रकार टंकारा व मथुरा से उदय हुआ ऋषि दयानन्द जी का जीवन सूर्य देश-विदेश व भूमण्डल में ईश्वरीय ज्ञान वेद की सत्य विद्याओं का प्रकाश सहित मानव मात्र के सर्वाधिक पूर्ण हित की आभा बिखेर कर अजमेर में दीपावली के दिन अस्त हो गया। हम ऋषि को कोटि कोटि प्रणाम करते हैं । यदि हम अपने जीवन में ऋषि की बताई शिक्षाओं व वेदमार्ग का कुछ भी अनुकरण व अनुसरण व अनुसरण कर सकें तो हमारा जीवन धन्य होगा ।

ऐसे रोकें, शादी की फिजूलखर्ची

डॉ. वेदप्रताप वैदिक

भारतीय समाज में तीन बड़े खर्चे माने जाते हैं । जनम, मरण और परण ! कोई कितना ही गरीब हो, उसके दिल में हसरत रहती है कि यदि उसके यहां किसी बच्चे ने जन्म लिया हो या किसी की शादी हो या किसी बुजुर्ग की मृत्यु हुई हो तो वह अपने सगे-संबंधियों और मित्रों को इकट्ठा करे और उन्हें कम से कम भोजन तो करवाए । इस इच्छा को गलत कैसे कहा जाए ? यह तो स्वाभाविक मानवीय इच्छा है । लेकिन यह इच्छा अक्सर बेकाबू हो जाती है । लोग अपनी चादर के बाहर पाँव पसारने लगते हैं ।

नवजात शिशु के स्वागत में लोग इतना बड़ा समारोह आयोजित कर देते हैं कि वह बच्चा जन्मजात क़र्जदार बन जाता है । शादीयों में लोग इतना खर्च कर देते हैं कि आगे जाकर उनका गृहस्थ जीवन चौपट हो जाता है । मृत्यु-भोज का कर्ज़ चुकाने में ज़िंदा लोगों को तिल-तिलकर मरना होता है । यह बीमारी आजकल पहले से कई गुना बढ़ गई है । आजकल निमंत्रण-पत्रों के साथ प्रेषित तोहफ़ों पर ही लाखों रू. खर्च कर दिए जाते हैं । यह शेख़ी का जमाना है । हर आदमी अपनी तुलना अपने से ज्यादा मालदार लोगों से करने लगता है । दूसरों की देखा-देखी लोग अंधाधुंध खर्च करते हैं । इस खर्च को पूरा करने के लिए सीधे-सादे लोग या तो कर्ज़ कर लेते हैं या अपनी ज़मीन-जायदाद बेच देते हैं और तिकड़मी लोग घनघोर भ्रष्टाचार में डूब जाते हैं । येन-केन-प्रकरेण पैसा कमाने के लिए वे कुछ भी करने को तैयार हो जाते हैं । अगर ये सब दाव-पेच भी फेल हो जाएं तो वे लड़की वालों पर सवारी गाँठते हैं । अपनी हसरतों का बोझ वे दहेज़ के रूप में वधू-पक्ष पर थोप देते हैं ।

इसी प्रकृति को क़ाबू करने के लिए सरकार का दहेज़-विरोधी प्रकोष्ठ कुछ ऐसे कानून-क़ायते लाने की सोच रहा है, जिससे शादियों की फिजूलखर्ची पर रोक लग सके । एक सुझाव यह भी है कि लोगों की आमदनी और शादी के खर्चे का अनुपात तय कर दें । यह सुझाव बिल्कुल बेकार सिद्ध होगा, जैसा कि चुनाव-खर्च का होता है । हॉ, अतिथियों की संख्या जरूर सीमित की जा सकती है और परोसे जानेवाले व्यंजनों की भी । इस प्रावधान का कुछ असर जरूर होगा लेकिन सबसे ज्याजा असर इस कदम का होगा कि जहां भी क़ानून के विरुद्ध लाखों-करोड़ों का खर्च दिखे, सरकार वहीं शादी के मौके पर छापा मार दे । वर-वधू के रिश्तेदारों को गिरफ्तार कर ले और उनसे हिसाब माँगें कि वे यह पैसा कहां से लाए । देश में अगर ऐसे दर्जन भर छापे भी पड़ जाएं तो शेष फ़िजूलख़र्च लोगों के पसीने छूट जाएँगे ।

समाज को कुरीतियों का कोढ़ लगा है और हम हाथ पर हाथ धरे मूक दर्शक बने बैठे हैं ? डॉ. वैदिक ने इस ज्वलंत समस्या पर अपने विचार और सुझाव रखे हैं ।

क्या आप डॉ. वेदप्रताप वैदिक के विचारों व उनके सुझावों से सहमत हैं ? क्या आप इस बारे में कुछ कहना चाहते हैं ?

- क्या आप के पास इस समस्या का कोई समाधान है ? क्या अभिमन्यु की तरह चक्रव्यूह में फंसे और पंगु होते समाज को आप कोई समाधान सुझा पाएंगे ?
- क्या आप आज के इस परिवेश, सामाजिक ढांचे और जीवन में परिवर्तन चाहते हैं ? क्या किया जाए ?
- अपने विचार केवल तभी दें यदि आप का कर्म उनसे मेल खाता हो - हाथी दांत वाले लोग कृपया क्षमा करें !

ऋषि दयानन्द

-प्रो. सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार

उन्नीसवी शताब्दी के मध्य तथा अन्तिम चरण में भारत का भाग्य एक नया मोड़ ले रहा था। सदियों से सुप्त पड़ी इस देश की चेतना अव्यक्त से व्यक्त की तरफ, सुषप्ति से जागृति की तरफ, जड़ता से प्रगति की तरफ अग्रसर हो रही थी। इस जाग्रत् चेतना की अभिव्यक्ति का क्या रूप था ? सदियों से सोई पड़ी यह चेतना जब भारत के नव-प्रभात में अंगड़ाई लेकर आँख खोलने लगी, तब १७७२ में बंगाल में राजा राममोहन राय ने और १८३४ में रामकृष्ण परमहंस तथा उसी काल के आसपास स्वामी विवेकानन्द ने जन्म लिया; १८२४ में गुजरात में महर्षि दयानन्द ने जन्म लिया; १८६३ में मद्रास में थियोसोफिकल सोसायटी ने जन्म लिया; १८८४ में महाराष्ट्र में प्रार्थना-समाज ने और दक्खन-एजुकेशन-सोसायटी ने जन्म लिया और इसी काल में मुसलमानों में चेतना के संचार के लिए सर सैयद अहमद ने जन्म लिया। ये सब भारत की विभूतियाँ थीं और इस देश के नव-निर्माण का सपना लेकर गंगा और हिमालय की इस देशभूमि का सदियों का संकट काटने के लिए प्रकट हुई थीं।

उन्नीसवीं शताब्दी में भारत में जिन विभूतियों ने जन्म लिया उनमें से ऋषि दयानन्द पर हम आज लिख रहे हैं। ऋषि दयानन्द आए परन्तु वे समय के दास बनकर नहीं आये, समय को अपना दास बनाने के लिए आए। महापुरुष यही-कुछ करते हैं। हम समझते है कि हमें जमाने के अनुसार चलना है, महापुरुष जमाने की गर्दन पकड़कर उसे अपने अनुसार चलाते हैं। वे खुद नहीं बदलते, जमाने को बदलते हैं। तोयनबी नामक प्रसिद्ध समाज-शास्त्री ने कहा है कि यह जीवन एक ललकार है, एक चैलेंज है, आह्वान है। साधारण लोग इस ललकार को सुनकर, इस चुनौति और आह्वान को सुनकर जीवन-संग्राम से भाग खड़े होते हैं, जमाने का रंग पकड़ लेते हैं; महापुरुष जीवन की ललकार का, जीवन के आह्वान का उत्तर देते है। वे इस चैलेंज का जवाब देते हु जीवन की समस्याओं के साथ झूक जाते हैं, जूझते हुए प्राणों की बाजी लगा देते हैं, परन्तु इस संघर्ष में पीठ नहीं दिखाते, जमाने के पलट देते हैं।

ऋषि दयानन्द जब इस देश के रणांगन में उत्तरे, तब उन्हें चारों तरफ ललकार-ही-ललकार सुनाई दी, चारों तरफ चुनौति ही चुनौति नजर आएं। सबसे बड़ा चुनौति था विदेशी राज्य का। उनके सामने ललकार उठी०क्या विदेशी राज्य को दरदाश्त करोगे ? ऋषि दयानन्द की आत्माने जवाब दिया- विदेशी राज्य को बर्दाश्त नहीं करूंगा। उन्होंने राजस्थान के राजाओं को अंग्रेजी शासन के प्रति विद्रोह करने के लिए तैयार करना शुरू किया। ऋषि दयानन्द के जीवन का बहुत वड़ा भाग राजस्थान के राजाओं को संगठित करने में बीता।

१८७३ में इस देश के गवर्नर जनरल लॉर्ड नॉर्थब्रुक थे। कलकत्ता के लॉर्ड बिशप ने लॉर्ड नॉर्थब्रुक तथा ऋषि दयानन्द में एक भेंट का आयोजन किया। इस भेंट में दोनों में जो बातचीत हुई उसका विवरण लॉर्ड नॉर्थब्रुक ने अपनी डायरी में लिखा। यह डायरी लन्दन में इण्डिया-हाउस में आज भी सुरक्षित है।

लॉर्ड नॉर्थब्रुक ने कहा- ''पण्डित दयानन्द, आप मत-मतान्तरों का खण्डन करते हैं। हिन्दुओं, ईसाइयों, मुसलमानों के धर्म की आलोचना करते हैं। क्या आप सरकार से किसी प्रकार की सुरक्षा नहीं चाहते।

ऋषि दयानन्द ने उत्तर दिया- ''अंग्रेजी राज्य में सबको अपने विचार प्रकट करने की पूरी स्वतन्त्रता है इसलिए मुझे किसी से किसी प्रकार का खतरा नहीं है।'' इस पर खुश होकर गवर्नर जनरल ने कहा कि ''अगर ऐसी बात है तो आप अपने व्याख्यानों में अंग्रेजी राज्य के उपकारों का वर्णन कर दिया कीजिए। अपने व्याख्यान के प्रारम्भ में जो आप ईश्वर-प्रार्थना किया करते हैं, उसमें देश पर अखण्ड अंग्रेजी शासन के लिए भी प्रार्थना कर दिया कीजिए।''

यह सुनकर ऋषि दयानन्द ने उत्तर दिया- ''श्रीमान् जी, यह कैसे हो सकता है ? मैं तो सायं-प्रातः ईश्वर से यह प्रार्थना किया करता हूँ कि इस देश को विदेशियों की दासता से शीघ्र मुक्त करे।''

लॉर्ड नार्थर्थब्रुक ने इस घटना का उल्लेख अपनी उस साप्ताहिक डायरी में किया जो वे भारत से प्रति-सप्ताह हर मैजेस्टी महारानी विक्टोरिया को भेजा करते थे। इस घटना का उल्लेख करते हु वे लिखते हैं कि ''मैंने इस बागी फकीर की कड़ी निगरानी के लिए गुप्तचर नियुक्त कर दिए हैं।''

देश की परतन्त्रता ही ऋषी दयानन्द के सम्मुख चुनौति बनकर नहीं खड़ी थी, वे अपने समाज में जिधर नजर उठाते थे उन्हें चुनौति-ही-चुनौति दीख पड़ते थे, उनके कानों में देश की समस्याओं की ललकार-ही-ललकार सुनाई पड़ती थी। वे महापुरुष इसलिए थे क्योंकि वे किसी चुनौति को सामने देखकर दम तोड़कर नहीं बैठते थे, किसी ललकार को सुनकर चुप नहीं रहते थे। समाज की हर समस्या से वे जूझे, हर फंड पर डटे, हर अखाड़े में छाती तानकर खड़े रहे। कौन-सी समस्या थी जो इस देश के महावृक्ष को घुन की तरह नहीं खा रही थी ? स्त्रियों को पर्दे में बन्द रखा जाता था, उन्हें शिक्षा का अधिकार नहीं

था । ऋषि दयानन्द ने रूढ़िबादी समाज की इस ललकार का उत्तर दिया । ऋषि दयानन्द ने पहले-पहल आवाज उठाई कि स्त्रियों को वे सब अधिकार हैं जो पुरुषों को हैं । जैसे वेद-मन्त्रों का साक्षात्कार करनेवाले पुरुष ऋषि हैं, वैसे वेद-मन्त्रों का साक्षात् करनेवाली स्त्री ऋषिकाओं के नाम पाये जाते हैं । ऋषि दयानन्द ने ''स्त्रीशूद्रौ नाथीयाताम्'' के नारे को रद्दी की टोकरी में फेंक दिया । 'शूद्र' संज्ञा देकर समाज के जिस वर्ग के साथ हम अन्याय तथा अत्याचार कर रहे थे, जिन्हें हमने मनुष्यता के अधिकारों से भी वंचित कर दिया था, उनके अधिकारों की रक्षा के लिए वे उठ खड़े हुए । ऋषि दयानन्द ने सामाजिक व्यवस्था के लिए एक नया दृष्टिकोण दिया । उन्होंने जन्म की जात-पॉत को मानने से इन्कार कर दिया । जब जन्म से जात-पाँत ही नहीं, न कोई जन्म से बड़ा न जन्म से छोटा, तब शूद्र कौन और अछूत कौन ? समय था जब समाज के एक वर्ग के लिए 'अछूत' शब्द का प्रयोग किया जाता था । आज हम उसके लिए 'हरिजन' शब्द का प्रयोग करते हैं । परन्तु किसी को हम 'अछूत' कहें, या 'हरिजन' कहें- अर्थ दोनों का एक ही है, वह हमसे अलग है, एक पृथक् वर्ग का है, हमारे समाज का हिस्सा नहीं है । आर्यसमाज ने 'अछूत' शब्द का प्रयोग नहीं किया, 'हरिजन' शब्द का प्रयोग भी नहीं किया । आर्यसमाज ने 'दलित' शब्द का प्योग किया । 'दलित' - अर्थात्, जिसे मैंने दल रखा है, जिसके अधिकारों को मैंने ठुकरा रखा है । 'अछूत' शब्द में जिसे 'अछूत' कहा गया उसे बुरा माना गया, 'दलित' शब्द में मैंने दूसरे को दबाया इसीलिए बुरा माना गया । ये दोनों शब्द एक ही भाव को व्यक्त करते हैं, परन्तु दोनों में दृष्टिकोण कितना भिन्न हो जाता है ! आर्यसमाज ने इस बात को समझा कि जब हम अछूत' शब्द का, या 'हरिजन' शब्द का प्रयोग करते हैं, तब हम उन्हें समाज की समस्या ही बने रहने देते हैं, चुनौति चुनौति ही बना रहता हैं । यही कारण है कि पहले 'अछूत' एक पृथक् वर्ग के तौर पर अपने अधिकार माँगता है । जब तक हम 'अछूत' या 'हरिजन' बने रहेंगे तभी तक तो विशेष अधिकारों की माँग कर सकें गे ! इसलिए जिस रास्ते पर हम चल रहे हैं उस पर तो 'अछूत' या 'हरिजन' बने रहना नफे का सौदा है । आज अनेक ब्राह्मण बालक अपने को 'अछूत' या 'हरिजन' कहलाना पसन्द करते हैं क्योंकि उससे उन्हें छात्रवृत्ति मिलती है । राजनीति के अखाड़े के अनेक उम्मीद-वार अपने को 'अछूत' या 'हरिजन' सिद्ध करने के लिए अदालतों में दौड़ते हैं क्योंकि इससे उन्हें असेम्बली या पार्लियामेंट की मैम्बरी मिलती है । परन्तु इससे क्या समाज की समस्या हल होगी ? ऋषि दयानन्द इस समस्या से जूझे थे । उन्होंने समाज के शब्दकोष से 'अछूत' शब्द को ही हटा दिया था ।

समाज जीता-जागता एक चुनौति है, चारों तरफ से ललकार है, आह्वान है, पुकार है । हम इस चुनौति का जबाव, इस ललकार और आह्वान का प्रत्युत्तर देंगे या नहीं देंगे ? हम समाज के चुनौति को देखते हुए भी नहीं देखते, ललकार को सुनते हुए भी नहीं सुनते । शरीर में पीड़ा हो, उसे जो अनुभव न करे वह जीवित नहीं मृत है; समाज के शरीर में रोग हो, उसे जो दूर करने के लिए छटपटाने न लगे वह मृत-समान है । ऋषि दयानन्द ने समाज के शरीर की पीड़ा को, इसके रोग को अनुभव किया, इसीलिए वे जीवित थे । उन्हें तो अपने समय का सारा समाज एक चुनौति के रूप में दीखा । हिन्दुओं का रूढ़िवाद एक महान् चैलेंज था । जहाँ देखो वहाँ प्रथा की दासता, रूढ़ि की गुलामी, जो चला रहा है ... उधर नहीं जा सकते । ऋषि दयानन्द ने रूढ़िवाद की इस थोथी दीवार को एक धक्के में गिरा दिया । अगर पौराणिक धर्म उन्हें एक चुनौति के रूप में दीख पड़ा तो ईसाइयत और इस्लाम भी उन्हें चुनौति देता हुआ दीख पड़ा । हिन्दुओं की जड़ जहाँ अपने कर्मों से खोखली हो रही थी, वहाँ ईसाइयत तथा इस्लाम भी उसे कमजोर करने में खुच उठा नहीं रख रहे थे । ऋषि दयानन्द जहाँ अपनों से जूझे वहाँ बाहरवालें से भी उसी तरह से जूझे । वे पौराणिक मतवादियों से, ईसाइयों से, मुसलमानों से- सबसे जूझ पड़े । दुनिया-भर के गन्द को जला डालने की उनमें हिम्मत थी । वह एक सूरमा थे जो दुनिया-भर के रूढ़िवाद से टक्कर लेने के लिए उठ खड़े हुए थे ।

ऐसे लोग दुनिया को बदल देने के लिए पैदा हुआ करते हैं । वे आते हैं, एक नई लहर चला जाते हैं, संसार को एक नया दृष्टिकोण दे जाते हैं । पुराना जड़वाद उन्हें बर्दाश्त नहीं कर सकता, और वे उस पुराने जड़वाद को दर्दाश्त नहीं कर सकते । वे जहर अगलते हैं, आग उगलते हैं, कूड़े-कर्कट को राख करते चले जाते हैं । लेकिन यह दुनिया भी ऐसी है कि उन्हें देर तक बर्दाश्त नहीं कर सकती । वे भी इसके लिए तैयार होते हैं । सुकरात अपने जमाने को बदलने के लिए आया था, उसे जहर का प्याला पीनी पड़ा । ईसामसीह एक नई दुनिया का सपना लेकर आया था उसे जिन्दा सूली पर लटक जाना पड़ा । दयानन्द अपने देश और जाति को नए ढाँचे में ढालने को आया था, उसे दूध में घुला जहर पीकर प्राण गँवाने पड़े । गाँधी एक नया संसार बना रहा था, उसे गोली का शिकर हो जाना पड़ा । यह दुनिया, इसको बदल देनेवालों को दर्दाश्त नहीं करती । परन्तु जहर देनेवाले, गोली चलानेवाले, तलवार उठानेवाले देखते हैं, और हाथ मल-मलकर देखते हैं कि जहर पीकर, गोली खाकर और प्राण देकर जो चले जाते हैं वे अपने पीछे एक ऐसी शक्ति छोड़ जाते हैं जो एक नवीन संसार का निर्माण कर देती है, एक नई दुनिया बना देती है । ऋषि दयानन्द भी अपने जमाने से जूझे, जमाने ने उन्हें जहर दे दिया, लेकिन जहर पीने के बाद विदाई की वेला में उनसे जो शक्ति की धारा फूटी उसने सदियों से चित पड़ी हुई इस भूमि का नक्शा ही बदल दिया । परमात्मा करे, हमारा देश भारत, महर्षि दयानन्द के सपनों का साकार रूप होकर महानता में हिमालय-सा, पवित्रता में गंगा-सा और विश्व में शान्ति की धारा बहाने में चन्द्रमा-सा उठ खड़ा हो ।

"ऋषिवर देव दयानन्द की राष्ट्र को देन"

-श्री खुशहाल चन्द्र आर्य

ऋषिवर देव दयानन्द से पहले आदि शंकराचार्य व बल्लभाचार्य से लेकर आधुनिक आचार्य करपात्री तक जितने भी आचार्य हु हैं, उनमें बुद्ध, महावीर, नानक, ईसा, मोहम्मद आदि भी आ जाते हैं, इन्होंने केवल अपने ही मत-पंथ, सम्प्रदाय का प्रचार किया । अपने ही मतावलम्बियों का हित चाहा और उन्हीं को बढ़ावा दिया । राष्ट्र चिन्तन, राष्ट्र प्रेम व राष्ट्र हित के सम्बन्ध में किसी ने दो शब्द भी नहीं कहे । भारत के इतिहास में केवल देव दयानन्द ही एक ऐसे धर्माचार्य, संन्यासी, बालब्रह्मचारी व वेदों के प्रकाण्ड विद्वान् हुए हैं, जिन्होंने अपने वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार के साथ-साथ राष्ट्र प्रेम, राष्ट्रहित के कार्य करने की बात कहीं है । केवल महर्षि ने ही देश के प्रति समर्पित होने की प्रेरणा दी है । वैसे तो महर्षि दयानन्द ने सर्वांगीण विकास की बात कही है, चाहे वह धार्मिक हो, शारीरिक हो, आत्मिक हो, सामाजिक हो व राजनैतिक हो, सभी विषयों में अपनी कलम चलाई है पर देशहित पर विशेष जोर दिया है । वे कार्य इस भाँति है ।

१. स्वतंत्रता के प्रथम उद्घोषकर्त्ता :- महर्षि दयानन्द सबसे पहले व्यक्ति थे जिन्होंने स्वतन्त्रता प्राप्ति का उद्घोष किया। उन्होंने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में लिखा कि अपना राज्य चाहे कितना भी बुरा क्यों न हो, तब भी वह विदेशी राज्य से कहीं अधिक अच्छा होता है । इसी को पढ़कर बाल गंगाधर तिलक ने कहा कि "आजादी लेना हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है" और राम प्रसाद विस्मिल, भगत सिंह, चन्द्रशेखर आजाद तथा रोशन सिंह आदि क्रान्तिकारियों ने जो आर्य समाजी विचारों के थे उन्होंने स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए अपना जीवन न्यौछावर कर दिया और हँसते-हँसते फाँसी के फन्दे को चूमा ! वीर सावरकर, भाई परमानन्द, लाला हरदयाल, लाला लाजपत राय ने अपने जीवन का एक-एक पल व एक-एक श्वांस देश को स्वतन्त्र करने के लिए समर्पित कर दिया इसी कारण यह कहना उचित ही है कि भारत को स्वतन्त्रता दिलाने में सबसे अधिक भाग आर्य समाजियों ने लिया । इसीलिए पट्टाभिसीतारामैया जो काँग्रेसी थे, उन्होंने काँग्रेस का इतिहास लिखा है, उसने स्वीकार किया है कि आजादी की लड़ाई में ८५ प्रतिशत आर्य समाजी ही थे । इस प्रकार स्वामी जी के उद्घोष से देश में नव क्रान्ति आई जिससे देश १९४७ के १५ अगस्त को स्वतन्त्र हुआ । इस आजादी पाने का सबसे अधिक श्रेय महर्षि दयानन्द और आर्य समाज को जाता है ।

२. नारी उत्थान :- महर्षि के आने से पहले देश में नारी जाति की बड़ी शोचनीय दसा थी । उनको घर की चार दिवारी के भीतर अपमानित होकर सहना पड़ता था । उनको पढ़ने तथा घूमने-फिरने का कोई अधिकार नहीं था । घर में जब लड़का पैदा होता था तो घर में थाली बजाकर खुशी मनायी जाती थी और जब लड़की होती थी तो पूरे घर में उदासी छा जाती थी । महर्षि दयानन्द ने नारी जाति को पुरुष के समान अधिकार दिलाया और उसको पढ़ने-पढ़ाने का भी अधिकार दिलाया । महर्षि ने कहा कि स्त्री-पुरूष गृहस्थ रूपी गाड़ी के दो पहिए हैं । यह दोनों समान होने चाहिए तभी गाड़ी ठीक चलेगी नहीं तो गृहस्थ में लड़ाई-झगड़ा रहेगा और गृहस्थ दुःखी बना रहेगा । यह महर्षि जी की ही कृपा है, जो इन्दिरा गाँधी नारी के साथ-साथ विधवा होते हुए भी भारत की प्रधानमन्त्री बनी । ममता बनर्जी व जयललिता मुख्यमन्त्री बनी हुई हैं और मुसलमानों में नारी पर और भी अधिक पाबन्दी है फिर भी महर्षि जी की जागृति से बेनज़ीर भुट्टो भी पाकिस्तान की प्रधानन्त्री बनी ।

३. अछूतोद्धार :- महर्षि जी के आने से पहले नारी जाति से कुछ कम या अधिक अपमानित जीवन अछूत (हरिजन) भाईयों का था । ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य उनकी परछाई से भी घृणा करते थे । यदि कोई हरिजन यानि अछूत बगल से भी निकल जाता था तो उसे पहले तो सौ गाली देते थे फिर स्नान करते थे तब उनको शान्ति मिलती थी । उनको पढ़ने का तथा पूजा-पाठ करने के लिए मन्दिर में प्रवेश होने का अधिकार नहीं था । उनका जीवन पूर्ण दुःखी व अपमानित था । जिसके कारण हमारे अछूत (शूद्र) भाई विदेशियों के लोभ, लालच व भय में आकर अपना हिन्दू धर्म छोड़कर मुसलमान व ईसाई बनने लगे । महर्षि ने जब अपने अछूत भाईयों की यह दशा देखी तो उनका हृदय रो पड़ा और उनको पढ़ने का तथा मन्दिरों में प्रवेश होने का अधिकार दिलाया । महर्षि ने कहा कि ईश्वर के सभी मनुष्य ही नहीं बल्कि प्राणी-मात्र ही पुत्र-पुत्रियों के समान हैं इसलिए ईश्वर सबका माता व पिता है और हम सब परस्पर भाई-भाई हैं । इसलिए एक भाई से घृणा करना मनुष्य का कर्त्तव्य नहीं है । इसीलिए आज अछूतों को हर काम में बराबर का अधिकार है और अछूत बड़े से बड़े पद पर जाने का अधिकारी बन गया है । इसीलिए जगजीवन राम जो चमार जाति से थे, वे भारत के उप-प्रधानमन्त्री बने । मायावती जो नारी भी हैं और हरिजन भी हैं, वह उत्तर प्रदेश की मुख्यमन्त्री बनीं । यह सब महर्षि जी की ही कृपा है ।

४. जाति जन्म से नहीं कर्म से होती है :- प्राचीन काल में महाभारत तक जब विश्वभर में वैदिक धर्म ही था, तब हर आँठ वर्ष का बच्चा या बच्ची को गुरुकुल में भेजना अनिवार्य था । जब ब्रह्मचारी पूर्ण विद्या पढ़कर गुरुकुल छोड़कर घर आने की तैयारी करता था तब गुरुकुल का आचार्य ब्रह्मचारी का समावर्त्तन संस्कार करके उसका वर्ण निर्धारित करता था, यानि गुण, कर्म, स्वभाव से वह ब्रह्मचारी, ब्राह्मण है, क्षत्रिय है, वैश्य है, या शूद्र है, उसीके अनुसार उसको वर्ण मिल जाता था और उसका विवाह भी उसी के गुण कर्म स्वभाव

के अनुसार उसी वर्ण की लड़की से करवा देता था और उसी वर्ण में रहते हुए वह अपना सुखी जीवन व्यतीत करता था । जब तक भारत में यह व्यवस्था बनी रहीं तब तक देश उन्नत व सम्पन्न बना रहा और विश्व का गुरु बना रहा । महाभारत के विकराल युद्ध के बाद सभी विद्वान्, आचार्य, योद्धा, नीतिवान समाप्त हो गये और स्वार्थी, अनपढ़ ब्राह्मणों ने अपने स्वार्थ के लिए गुण, कर्म, स्वभाव को छोड़ जन्म से जाति मानने लगे तभी से देश पतित होना आरम्भ हो गया । महर्षि दयानन्द ने इस बात को समझ लिया और वैदिक धर्म का प्रचार-प्रसार करते हुए गुण, कर्म, स्वभाव से वर्ण स्थापित होने पर जोर दिया जिससे अब कुछ सुधार होता दिखाई दे रहा है ।

५. अज्ञान, अन्धविस्वास व पाखण्ड पर कड़ा प्रहार :- महाभारत से एक हजार वर्ष पूर्व से वेद ज्ञान का ह्रास्य लगा था, पूरे देश में अज्ञान, अन्धविश्वास व पाखण्ड के पैर जमने लगे थे । महाभारत के भीषण युद्ध मे विश्व के सभी विद्वान, आचार्य, योद्धा तथा वीर पुरूष समाप्त हो गये थे और स्वार्थी, अज्ञानी लोगों का प्रभुत्व हो गया था जिससे देश में अनेक मत-मतान्तर फैल गये और अज्ञान, अन्धविश्वास व पाखण्ड का बोलबाला हो गया । भूत-प्रेत, गण्डा-डोरी, फलित ज्योतिष, श्राद्ध-तर्पण, शगुन-अपशगुन आदि अनेक अन्धविश्वास व पाखण्ड कुछ कुरीतियाँ जैसे बाल-वृद्ध विवाह, सती प्रथा आदि चल पड़े जिससे देश पतन की ओर अग्रसर हो गया । साथ ही जैनियों की मूर्ति पूजा करने से जैन धर्म को बढ़ता देखकर हिन्दुओं ने भी राम व कृष्ण को अवतार घोषित करके उनकी पूजा करवानी आरम्भ कर दी जिससे हिन्दुओं ने भी राम व कृष्ण को अवतार घोषित करके उनकी पूजा करवानी आरम्भ कर दी जिससे हिन्दू जैन धर्म में जाने से तो रुक गये लेकिन मूर्ति पूजा से हिन्दुओं को बड़ा नुकसान पहुँचा । सही ईश्वर उपासना जो स्तुति प्रार्थनोपासना है उसको छोड़कर सभी मूर्ति पूजा में लग गये । मूर्ति-पूजक चरित्र को गौण और मूर्ति-पूजा को मुख्य समझने लगे जिससे देश की चरित्र की हानि हुई और देश पतन की ओर बढ़ने लगा । जब महर्षि दयानन्द ने देश की यह पतित अवस्था देखी और यह समझ लिया की यह स्थिति वेद ज्ञान जो ईश्वरीय ज्ञान है उसके प्रायः लुप्त हो जाने से यह स्थिति बनी है । तब महर्षि ने अनेक दुःख कष्ट व अभावों को सहकर अपने सच्चे गुरु स्वामी विरजानन्द की गोद में बैठकर करीब तीन साल तक वेद ज्ञान का अध्ययन किया और गुरू आज्ञा से ही वेद ज्ञान का प्रचार व प्रसार करने का व्रत लेकर वेदों का प्रचार किया जिससे देश में नव जागृति आई और हिन्दुओं में जो कुरीतियाँ, कुप्रथाएँ, अन्धविश्वास व पाखण्ड था उन पर कुछ अंशों में रोक लग गई जिससे देश वेद-ज्ञान की ओर अग्रसर हुआ और उससे स्थिति में काफी सुधार आया ।

६. आर्य बाहर से नहीं आये :- जब देश अंग्रेजों के अधीन हुआ तब हिन्दुओं के स्वाभिमान को नष्ट करने के लिए भारत के इतिहासकारों को कुछ लोभ लालच देकर उनसे भारत के इतिहास में कुछ गलत बातें लिखवा दी । पहली बात तो यह लिखवाई कि आर्य भी ईरान से या मध्य एशिया आदि बाहर से आये थे । दूसरी बात यह लिखवाई कि भारत के ऋषि-मुनि जो वैदिक काल में हुए थे, वे भी गो-माँस खाते थे आदि । जिससे हिन्दुओं का गौरव तो घटा ही साथ ही उनका विशेष महत्व भी समाप्त हो गया । इस स्थिति को समझकर महर्षि जी ने वेदों के आधार पर कहा कि ईश्वर ने सृष्टि के आदि में तिब्बत के पठार पर कृत्रिम गर्भाशय बनाकर युवा अवस्था में अनेक नर-नारी उत्पन्न किये जिससे आगे की सृष्टि चले । वहाँ पर आर्य व अनार्य दोनों थे हजारों वर्ष बाद उनका परस्पर झगड़ा होने से तिब्बत के पठार से आर्य नीचे आ गये । जिस भाग में आर्य बसें, उन्होंने उस प्रदेश को आर्यावर्त्त कहना आरम्भ कर दिया और स्वयं को आर्य कह कर रहने लगे । वहीं आर्य कालान्तर में हिन्दू बने । इस प्रकार हिन्दू यानि आर्य और आर्यावर्त्त यानि हिन्दुस्तान के आदि निवासी है, न कि बाहर से आये हैं । महर्षि ने एक बात और कही यदि आर्य बाहर से आये हैं आर्यों के आने से पहले इस देश का क्या नाम था, हमें, इतिहास में लिखा दिखाओ । इस बात पर सब की बोली बन्द हो गई । महर्षि के बाद स्वामी सम्पूर्णानन्द तथा अन्य कई इतिहास कारों ने इस बात को माना ।

७. गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का समर्थन किया :- वैदिक काल में केवल भारत में ही नहीं पूरे विश्व में गुरुकुल शिक्षा का प्रचलन था । उनसे जो ब्रह्मचारी निकलते थे, वे पूर्ण चरित्रवान ईश्वर विश्वासी, विद्वान्, साहसी, शक्तिवान, धैर्यवान तथा समाज, धर्म व राष्ट्र के रक्षक होते थे जिससे केवल एक राष्ट्र ही नहीं बल्कि मानव मात्र वेदानुकूल चल कर मोक्ष प्राप्ति के अधिकारी बनते थे । जबसे अंग्रेज भारत में आये तब से अंग्रेजी शिक्षा का प्रचार होना आरम्भ हो गया और देश पश्चिमी सभ्यता की ओर जाने लगा । महर्षि ने यह स्थिति देखकर गुरुकुल शिक्षा का प्रचार किया और उनके बाद उनके शिष्य स्वामी श्रद्धानन्द, स्वामी ओमानन्द, स्वामी धर्मानन्द आदि ने गुरुकुल शिक्षा पद्धति का बहुत प्रचार किया । आज तो देश में हजारों की संख्या में गुरुकुल खुले हुए हैं जिनसे अच्छी उम्मीद रखी जा रही है ।

८. देश के महान् पुरुषों के चरित्र को संवारा :- देश के महान् पुरुष श्री कृष्ण, हनुमान, बाली, सुग्रीव आदि के बारे में काफी गलत बाते जोड़ रखी थी । सबसे अधिक तो भगवान् श्री कृष्ण जैसे महान् योगी को एक चरित्रहीन, नचनवा, लड़कियों के पीछो घूमने वाला, अनेकों पत्नियोंको रखने वाला बना रखा था । महर्षि ने उनको एक महान् योगी, एक पत्नीव्रता, एक महान् योद्धा बतला कर उनके चरित्र को केवल संवारा ही नहीं बल्कि यह लिखकर कि श्री कृष्ण ने जन्म से लेकर मृत्यु पर्यइत कोई गलत काम किया ही नहीं । उनके जीवन को और अधिक उज्ज्वल बना दिया । हनुमान, बाली-सुग्रीव आदि को बन्दर बना रखा था । उनकी एक वानर जाति बतलाकर उनको मनुष्य ही बतलाया । इस प्रकार उनके सही स्वरूप को प्रकट किया ।

९. शुद्धि प्रथा का प्रचलन किया :- हमारे गरीब, अनपढ़, लाचार हिन्दू वनवासी भाई-बहिनें जिन्होंने भय, लोभ, लालच से धर्म परिवर्तन कर लिया था, उनको पुनः हिन्दू बनाया और हिन्दुओं को संजीवनी बूटी पिलाई । महर्षि देव दयानन्द द्वारा संचालित इन सब कार्यों से देश में नव-जागृति आई जिससे भारत उन्नत और समृद्धि की ओर बढ़ रहा है । वह दिन दूर नहीं जब हमारा देश पुनः "विश्व गुरु" व "सोने की चिड़िया" कहलाने लगेगा ।

महात्मा बुद्ध एक आर्य सुधारक

-स्वामी धर्मानन्द

जन्मानुसार वर्णव्यवस्था और यज्ञों में पशु-हिंसादि का विरोध- निष्पक्षपात दृष्टि से विचार करने पर स्पष्ट ज्ञात होता है कि महात्मा बुद्ध के समय में अनेक सामाजिक और धार्मिक विकार उत्पन्न हो गये थे, लोग सदाचार, आन्तरिक शुद्धि, ब्रह्मचर्यादि की उपेक्षा करके केवल बाह्य कर्मकाण्ड व क्रिया-कलाप पर ही बल देते थे । अनेक देवी देवताओं की पूजा प्रचलित थी तथा उन देवी देवताओं को प्रसन्न करने के लिये लोग यज्ञों में भेड़ों और बकरियों, घोड़ों की ही नहीं, गौओं की भी बलि चढ़ाते थे । वर्णव्यवस्था को जन्मानुसार माना जाता था और जाति भेद उच्चनीच भावना को उत्पन्न करके भयङ्कर रूप धारण क रहा था । उच्च कुल में जन्म के अभिमान से लोग उपने को उच्च समझते और अन्यों को विशेषतः शूद्रों को अत्यन्त घृणा की दृष्टि से देखते थे । बहुत से लोगों को अस्पृश्य भी समझा जाता था । ये उच्चकुलाभिमानी अपने अन्दर ब्राह्मणोचित गुणों को धारक करने का कुछ भी प्रयत्न न करते थे और वस्तुतः अनमें से बहुतों का जीवन बड़ा पतित था तथापि अन्यों को हीन दृष्टि से देखते हुए उन्हें लज्जा न आती थी । पवित्र जीवन निर्माण की ओर ध्यान न देते हुए भी वे शुष्क दर्शनिक चर्चा में अपना समय अवश्य नष्ट करते थे और बौद्ध ग्रन्थों तथा ब्रह्मजाल सुत्त आदि में जो उनके दार्शनिक विचारों का वर्णन पाया जाता है उनसे स्पष्ट ज्ञात होता है कि वे प्राचीन ऋषियों के शुद्ध विचारों से बहुत दूर जा चुके थे तथा भाग्यवादी, अकर्मण्यतावादी, भौतिकवादी, नित्यपदार्थवादी तथा अक्रियावादी बने हुए पाप-पुण्य, कर्म नियम, सदाचारादि की कोई परवाह न करते थे । उदाहरणार्थ अजित केशकम्बल नामक एक प्रसिद्ध दार्शनिक, महात्मा बुद्ध का समकालीन था जिस का मत यह था कि-

"दान-यज्ञ-हवन यह सब व्यर्थ हैं, सुकृत दुष्कृत कर्मों का फल नहीं मिलता । यह लोक-परलोक नहीं । दान करो यह मूर्खों का उपदेश है । जो कोई आस्तिकवाद की बात करते हैं वह उनका तुच्छ (थोथा) झूँठ है । मूर्ख हों चाहे पण्डित, शरीर छोड़ने पर सभी उच्छिन्न हो जाते हैं, विनष्ट हो जाते हैं मरने के बाद कुछ नहीं रहता ।"[9]

मक्खलि गोशाल के दार्शनिक विचार- मक्खलि गोशाल नामक एक अन्य दार्शनिक महात्मा बुद्ध के समकालीन थे । उनका मत था कि 'प्राणियों के संक्लेश (चित्तमालिन्य) का कोई हेतु नहीं । बिना हेतु व कारण के ही प्राणी संक्लेश को प्राप्त होते हैं । प्राणियों की (चित्त) विशुद्धि का कोई हेतु नहीं । बिना हेतु के प्राणी विशुद्ध होते हैं । बल नहीं, वीर्य नहीं, पुरुष की दृढ़ता, पुरुष पराक्रम ही काम आते । सभी सत्त्व, सभी प्राणी, सभी भूत, जीव, बलवीर्य के बिना ही नियति (भवितव्यता) के वश में छह अभिजातियों (जन्मों) में सुख-दुःख अनुभव करते हैं ।'..... वहाँ यह नहीं कि इस शील व्रत से, इस तप ब्रह्मचर्य से मैं अपरिपक्व कर्म को परिपक्व करूँगा, परिपक्व कर्म को भोगकर उसका अन्त करूँगा । सुख और दुःख द्रोण (नाप) से नपे हुए हैं । संसार में घटना-बढ़ना, उत्कर्ष अपकर्ष नहीं होता । जैसे कि सूत की गोली फेंकने पर खुलती हुई गिर पड़ती है वैसे ही मूर्ख और पण्डित दौड़कर, आवागमन में पड़कर दुःख का अन्त करेंगे ।

इससे जान पड़ता है कि मक्खलि गोशाल (आजीवक) पूरा भाग्यवादी था । पुनर्जन्म और देवताओं को मानता था और कहता था कि जीवन का रास्ता नपा-तुला है, पाप-पुण्य उसमें कोई अन्तर नहीं डालते ।

पूर्ण काश्यप के दार्शनिक विचार-अक्रियावाद-यह भी बुद्ध समकालीन एक प्रसिद्ध दार्शनिक था । वह अच्छे-बुरे कर्मों को निष्फल बताता था । कर्म करते-कराते, छेदन करते-कराते, प्राण मारते, बिना दिया लेते (चोरी करते), सेंध काटते, गाँव लूटते, चोरी-बटमारी करते, परस्त्रीगमन कते, झूँठ बोलते भी पाप नहीं लगता । यदि घात करते-कराते, काटते-कटवाते, गङ्गा के उत्तर तीर से दक्षिण तीर पर भी चला जो तो भी इसके कारण उसको पाप नहीं होगा, पाप का आगम नहीं होगा । दान देतेदिलाते, यज्ञ करते-कराते यदि गङ्गा के उत्तर तीर पर भी चला जाए तो भी इसके कारण उसको पाप नहीं होगा, पाप का आगम नहीं होगा । दान देते दिलाते, यज्ञ करते कराते यदि गंगा के उत्तर तीर भी जाए तो इस कारण उसका पुण्य नहीं होगा । दान दम संयम से, सत्य बोलने से न पुण्य है, न पुण्य का आगम है ।

(दर्शन-दिग्दर्शन ४९१-४९२)

प्रक्रुध कात्यायन-नित्य पदार्थवादी-यह भी बुद्ध समकालीन एक प्रसिद्ध और लोक सन्मानित तीर्थङ्कर था । इसका मत यह था कि पृथिवीकाय (पृथिवीतत्व) जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, सुख, दुःख और जीवन ये सात तत्व अकृत जैसे अनिर्मित जैसे कूटस्थ जैसे, अचल हैं, विकार को प्राप्त नहीं होते, न एक दूसरे को हानि पहुँचाते हैं ।

यहाँ न कोई हन्ता है, न हनन करनेवाला, न सुननेवाला, न सुनानेवाला, न जाननेवाला, न जतलानेवाला । यदि तीक्ष्ण शस्त्र से भी काट दे तो भी कोई किसी को नहीं मारता । इत्यादि इस प्रकार यह भी पाप-पुण्य को व्यर्थ-सा माननेवाला पूर्ण अकर्मण्यतावादी था । (दर्शन-दिग्दर्शन पृ० ४९२)

संजय वेरत्तिपुत-अनेकान्तवादी-इसका मत अनेकान्तवाद का था अर्थात् यदि आप पूछें क्या परलोक है तो यदि मैं समझता होऊँ कि परलोक है तो आपको बतलाऊँ कि परलोक है । मैं ऐसा भी नहीं कहता, वैसा भी नहीं कहता दूसरी तरह से भी नहीं कहता । मैं यह भी नहीं कहता कि व नहीं है । मैं यह भी नहीं कहता कि वह है । परलोक नहीं है, परलोक नहीं-नहीं है, परलोक है भी और नहीं भी है । परलोक न है और न नहीं है, देवता नहीं हैं, हैं भी और नहीं भी न हैं, और न नहीं हैं । अच्छे-बुरे कर्म के फल हैं, नहीं हैं, हैं भी और नहीं भी, न हैं और न नहीं हैं । इत्यादि ।

(दर्शन-दिग्दर्शन पृ० ४९५)

इसी प्रकार अन्य ऊट-पटाँग, वेसिर पैर के और सदाचार की सर्वथा उपेक्षा करनेवाले दार्शनिक मत प्रचलित थे जिनका महात्मा बुद्ध को खण्डन करना पड़ा ।

जाति भेद का प्रबल खण्डन- वैदिक धर्म में वर्णव्यवस्था को गुण-कर्म-स्वभावानुसार बतलाया गया है । **"अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते सं भ्रातरो**

वावधुः सौभगाय । युवा पिता स्वपा रुद्र एषां सुदुघा पृश्निः सुदिना मरुद्भ्यः'' (ऋ० ५ । ६० । ५) इत्यादि वेद-मन्त्रों में यही स्पष्ट उपदेश है कि सब मनुष्य भाई हैं । जन्म के कारण कोई बड़ा वं छोटा, ऊँचा या नीचा नहीं । परमेश्वर सबका एक पिता और प्रकृति व भूमि सबकी एक माता है । ऐसा मानकर आचरण करने से ही सबको सौभाग्य की प्राप्त होती और वृद्धि होती है । वेदों में ब्राह्मण, क्षत्रियादि शब्द यौगिक और गुणवाचक हैं । जो ब्रह्म अर्थात् परमेश्वर और वेद को जानता और उनका प्रचार करता है, वह ब्राह्मण है । क्षत व आपत्ति से समाज और देश की रक्षा करनेवाले क्षत्रिय, व्यापारादि के लिये एक देश से दूसरे में प्रवेश करनेवाले वैश्य और शु-आशु द्रवति अथवा शुचा द्रवति इस व्युत्पत्ति के अनुसार सेवार्थ इधर-उधर दौड़नेवाले और उच्च ज्ञानरहित होने के कारण शोक करनेवाले शूद्र कहलाते हैं । **''उपह्वरे च गिरीणां, सङ्गमे च नदीनाम् । धिया विप्रो अजायत ।।''** (यजु० २६ । १५) इत्यादि मन्त्रों में यही बतलाया गया है कि पर्वतों की उपत्यकाओं, नदियों के सङ्गम इत्यादि रमणीक प्रदेशों में रहकर विद्याध्ययन करने और (धिया) उत्तम बुद्धि तथा अति श्रेष्ठ कर्म से मनुष्य ब्राह्मण बन जाते हैं । **''प्रियं मा कृणु देवेषु प्रियं राजसु मा कृणु । प्रियं सर्वस्य पश्यत, उत शूद्र उतार्ये ।''**

इत्यादि वेद-मन्त्रों में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र सबके साथ प्रेम करके सबके प्रेम पात्र बनने का उपदेश है ।

''ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः। ऊरू तदस्य यद् वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत ।।''*

इत्यादि मन्त्रों में मनुष्य समाज की एक पुरुष शरीर के साथ उपमा देते हुए जो मुख के समान ज्ञान सम्पन्न होकर वाणी द्वारा उस ज्ञान का प्रचार करनेवाला तथा स्वार्थ रहित तपस्वी हो वह ब्राह्मण, बाहु के समान समाज और राष्ट्र की शत्रुओं से रक्षा करने में समर्थ क्षत्रिय, शरीर के मध्य भाग के समान संगृहीत धन को जनता के हित के कार्यों में लगानेवाला वैश्य और पैरों के समान सबकी सेवा करने वाला शूद्र कहलाता है। शरीर के ये सब अङ्ग समानतया उपयोगी हैं और इनके परस्पर सहयोग से ही शरीर का कार्य चलता है । इस प्रकार का र्सजनोपयोगी सुन्दर उपदेश दिया गया है जिसको न समझकर अज्ञान व स्वार्थवश पौराणिक काल में यह समझा गया कि ब्रहाह्मण ब्रह्मा के मुख से उत्पन्न हुए, क्षत्रिय बाहुओं से, वैश्य जाँघों से और शूद्र पैरों से । इस प्रकार जन्मगत ऊँच-नीच की अशुद्ध और अत्यन्त हानिकारक कल्पना की गई । इसी का एक आर्य सुधारक के रूप में महात्मा बुद्ध ने प्रबल खण्डन किया ।

माननीय डॉ- भीमराव अम्बेदकरजी ने महाबोधि (Mahabodhi) नामक पत्र के वैशाख अंक (मई १९४०) में 'Buddha and the Future of His Religion' पर लेख लिखते हुए लिखा था कि- 'Buddha was the greatest opponent of Chatur Varnya' अर्थात् बुद्ध चातुर्वर्ण्य के सबसे बड़े विरोधी थे (देखो पृ० १९९), किन्तु वस्तुतः ऐसा कथन सर्वथा अशुद्ध है । महात्मा बुद्ध ने जन्मानुसार वर्णव्यवस्था मानने का खण्डन किया है किन्तु गुण-कर्मानुसार ब्राह्मण आदि मानने का उन्होंने स्पष्ट प्रतिपादन किया है ।

सुत्त निपात वसिट्ठ सुत्त में वर्णन है कि वसिट्ठ (वसिष्ठ) और भारद्वाज नामक दो ब्रहाह्मणों का जाति भेद के विषय में विवाद हुआ । उस विवाद का विषय वसिट्ठ (वसिष्ठ) ने इस प्रकार बताया है कि-

तेसं नो जातिवादस्मिं विवादो अत्थि गौतम । जातिया ब्राह्मणो होति भारद्वाजो इति भासति । अहं च कम्मणा ब्रूमि, एवं जानाहि चक्खुमा ।।१

अर्थात् हमारा जाति भेद के विषय में विवाद हो गया है । भारद्वाज कहता है कि ब्राह्मण जन्म से होता है और में कहता हूँ कि वह कर्म से होता है । इसपर उन्होंने महात्मा बुद्ध से व्यवस्था माँगी है कि-

चक्खुं लोके समुप्पन्नं, भयं पुच्छाम गौतमम् । जातिया ब्राह्मणो होति? उदाहु भवति कम्मणा। अजानतं नो प्रब्रूहि, यथा जानेमु ब्राह्मणम्।।२

अर्थात् आप ज्ञान दृष्टि सम्पन्न हैं, अतः आपसे हम पूछते हैं कि ब्राह्मण जन्म से होता है वा कर्म से । इस पर महात्मा बुद्ध ने यह बताते हुए कि- 'जीव जनतुओं में एक दूसरे से बहुत-सी विभिन्नताएँ और विचित्रताएँ पाई जाती हैं और उनमें श्रेणियाँ भी अनेक हैं । इसी प्रकार वृक्षों और फलों में भी विविध प्रकार के भेद-प्रभेद देखने में आते हैं, उनकी जातियाँ भी कई प्रकार की हैं ।

देखो न साँप कितनी जातियों के हैं ? जलचरों और नभचरों के भी असंख्य स्थिर भेद हैं जिनसे उनकी जातियाँ लोक में भिन्न-भिन्न मानी जाती हैं ।' कहा-

यथा एतेसुजातीसु, लिङ्गं जातिमयं पुथु । एवं नात्थि मनुस्सेसु, लिङ्गं जातिमयं पुथु ।।

न केसेहि न सीसेन, न कन्नेहि नाक्खिहि ।

न मुखेन न नासाया न ओट्ठेहि भमूहि वा ।।

न जिह्वया न अंसेहिं, त उदरेन न पिट्ठिया ।

न सोणिया न उरसा, न सम्बाधे न मेथुने ।।

लिङ्गं जातिमयं नेय, यथा अन्नेसु जातिषु ।।[9]

अर्थात् मनुष्यों के शरीर में तो ऐसा कोई भी पृथक् चिह्न (लिङ्गभेदक चिह्न, कहीं देखने में नहीं आता । उनके केश, सिर, कान, आँख, मुख, नाक, गर्दन, कन्धा, पेट, पीठ, हथेली, पैर, नाखून आदि अङ्गों में कहाँ हैं ऐसी विभिन्नताएँ ? जो मनुष्य गाय चराता है उसे हम चरवाहा कहेंगे ब्रहाह्मण नहीं । विभिन्नताएँ ? जो मनुष्य गाय चराता है उसे हम चरवाहा कहेंगे ब्रह्मण नहीं ।

जो व्यापार करता है वह व्यापारी ही कहलाएगा और शिल्प करनेवाले को हम शिल्पी ही कहेंगे ब्राह्मण नहीं ।

दूसरों की परिचर्या करके जो अपनी जीविका चलाता है वह परिचर ही कहा जाएगा ब्राह्मण नहीं ।

अस्त्रा-शस्त्रों से अपना निर्वाह करनेवाला मनुष्य सैनिक ही कहा जाएगा ब्राह्मण नहीं । अपने कर्म से कोई किसान है तो कोई शिल्पकार कोई व्यापारी है तो कोई अनुचर । कर्म पर ही जगत् स्थित है ।

न जच्चा ब्राह्मणो होति, न जच्चा होति अब्राह्मणो ।

कम्मना ब्राह्मणो होति, कम्मना होति अब्राह्मणो ।। ६५० ।।

अर्थात् न जन्म से कोई ब्राह्मण होता है, न जन्म से अब्राह्मम । कर्म से ही मनुष्य ब्राह्मण होता है और कर्म से अब्राह्मण ।

न चाहं ब्राह्मण ब्रूमि योनिजमत्तिसंभवम् । भोवादी नाम सो होति, स वे होति सकिंचनो। अकिंचनं अनादानं तम् अहं ब्रूमि ब्राह्मणम्।।६२०।। अक्कोसं बधबन्धौ च, अदुट्ठो यो तितिक्खति। खन्तीबलं बलानीकं, तम् अहं ब्रूमि ब्राह्मणम् ।।६२३।। अक्कोधनं वतवन्तं सीलवन्तम् अनुस्संदम् । दान्तमन्तिम शारीरं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणम्।।६२४।। वारि पोक्खरपत्ते व आरग्गरिव सासपो । यो न लिप्पति कामेसु, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणम्।।६२५।। गम्भीर पञ्ञं मेधाविम्, मग्गामग्गस्य कोविदम् । उत्तमत्थमनुप्पात्तं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणम् ।।६२७।।

शेष अगले अंक में...

మీరట్, మే 10

– ఎం.వి.ఆర్.శాస్త్రి

ఆరోజు అన్నీ అపశకునాలే. ఎక్కడ విన్నా గుండెలదిరే వదంతులే. 'ఈరోజు సిపాయిలు తిరుగుబాటేదో చేస్తారటమ్మా. అంతా అనుకుంటున్నారు' అని ఒక తెల్లదొర ఇంట్లో పనిచేసే పిల్ల మేమ్‌సాహెబ్ చెవిన వేసింది. ఆమె కంగారుపడి ఇరుగూ పొరుగూ దొరసానులను వాకబు చేసింది. వారికి ఏమీ తెలియదు. వారి పరిచారికలు ఆ పూట ఇంకా పనికి రాలేదు. వారికే కాదు. ఆరోజు మీరట్ మిలిటరీ లైన్సులోనూ, సివిల్ ఏరియాల్లోనూ చాలామంది యూరోపియన్ల ఇంటి పనిమనుషులు చెప్పాపెట్టకుండా డుమ్మా కొట్టారు. దొరలూ, దొరసానులూ ఆ సంగతి మొదట్లో అంతగా పట్టించుకోలేదు.

మీరట్ సిపాయిలకు పొద్దున్నే చెడ్డకబురు. నిన్న 85 మందికి చేసినట్టే ఇవాళ స్టేషన్లోని మిగతా సిపాయిలందరికీ కూడా ఆయుధాలు లాక్కుని, సంకెళ్లు వేసి జైలుకు పంపిస్తారనట. అందుకోసం రెండువేల జతల సంకెళ్లను చేయించి పెట్టారట. సిపాయిల ఒళ్లు ఝల్లుమంది. వట్టి పుకారేనని సరిపుచ్చుకున్నా బహుశా అది నిజమేనేమోనన్న భయం రోజంతా పీకింది. నిన్నటి పెరేడ్‌లో తమ సోదరులకు పట్టిన దుర్గతికి అందరికీ క్షోభ, క్రోధం కలిగినా, తెగించి వెంటనే ఏదో ఒకటి చేయాలన్న విషయంలో సిపాయిలందరూ ఒక్కమాట మీద లేరు. కొంచెం ఆగుదామనేవారు, నింపాదిగా ఆలోచిద్దామనేవారు, ఏమి చేస్తే ఏమి మూడుతుందోనని భయపడేవారు, సర్కారు కొండతో ఢీకొంటే మనకే తల పగులుతుందని వెనకాడేవారు... నేటివ్ రెజిమెంట్లలో చాలామందే ఉన్నారు.

ఐనా – ఉడుకు నెత్తురు యువ సైనికులు మాత్రం ఇలాంటివారి వారింపులు ఆలకించటానికి సిద్ధంగా లేరు. సాయంత్రం యూరోపియన్ రైఫిల్స్, కార్బయిన్స్ దళాలు చర్చి పెరేడ్‌కు వెళ్లాక, ప్రార్థనలు మొదలవగానే రంగంలోకి దూకాలని వారు పెద్దసంఖ్యలో కాచుకుని ఉన్నారు.

ఆ రోజునూ, ఆ సమయాన్నీ దాడికి ఎంచుకోవటానికి కారణం ఉంది. చర్చి పెరేడ్‌కు తెల్ల సోల్జర్లు ఆయుధాలు వదిలేసి వెళతారు. వార్నుడ ప్రార్థనల్లో ఉండగా ఇక్కడ అనుకున్న పని మొదలెడితే అడ్డుకునే వాళ్లుండరు. సాయంత్రం చర్చి సర్వీసు కాగానే చీకటి పడుతుంది. పారిపోవటం తేలిక.

అనుకున్నట్టే అంతా జరిగింది. కాని ఒక్కచోట అంచనా తప్పింది. సాయంత్రం చర్చి గంటలు మోగగానే చర్చి పెరేడ్ మామూలుగా మొదలవుతుందని సిపాయిలు ఊహించారు. నడి వేసవిలో ఎండలు మరీ మండిపోతుండడం వల్ల ఆ ఆదివారం చర్చి పెరేడ్‌ను అర్ధగంట ఆలస్యంగా మొదలెట్టారు. ఆ సంగతి సిపాయిలకు తెలియదు. చర్చి గంట మోగగానే వారు లైన్స్‌లో చేరి కాల్పులూ, గృహ దహనాలూ, ఆయుధాగారాల మీద పడి తుపాకులు గుంజుకునే యత్నాలూ మొదలెట్టారు. చర్చికి వెళ్లేవాళ్లు ఇంకా దారిలో ఉండగానే దురాన మిలిటరీ, సివిల్ ఏరియాల నుంచి మంటలు, పొగలు కనిపించాయి. తుపాకుల చప్పుళ్లు వినిపించాయి.

రెండేళ్లపాటు దేశాన్ని పోరుబాటలో నడిపించి 'కంపెనీ' దొరతనాన్ని కంటికి కునుకు లేకుండా అతలాకుతలం చేసే మహాపోరాటం మొదలైంది.

సైనిక చర్చిలో ప్రార్థనలు నిర్వహించే చాప్లాన్ ఇద్దరు పిల్లల్ని ఇంటి దగ్గర వదిలేసి భార్యతో కలిసి చర్చికి బయలుదేరుతుండగా ''ఇవాళ సిపాయిలేదో పెద్ద గొడవ చేస్తారటమ్మా, జాగ్రత్త'' అని ఆయా హెచ్చరించింది. దాంతో ఆ ఇల్లాలు భయపడి పిల్లల్ని కూడా వెంట తీసుకుని బండి ఎక్కింది. దూరాన దట్టమైన పొగలు, మంటలు చూశాక మంచి పనిచేశామని వారికి అర్థమైంది. చాప్లాన్ చర్చిలో అడుగుపెడుతూండగానే అలారం మోగించటమూ, పెరేడ్ డిస్మిస్ చేసి యూరోపియన్ రైఫిల్స్ సోల్జర్లను బారక్స్‌కు తిరిగి పంపించటమూ జరిగిపోయాయి.

వారు రావటం దూరాన్నించి చూసి వంట కుర్రాడొకడు సిపాయి లైన్సులోకి పరుగెత్తి ''ఆర్టిలరీ, రైఫిల్స్ వాళ్లు వచ్చేస్తున్నారు. రెజిమెంట్ల వాళ్లందరినీ పట్టుకుపోతారు'' అని కేకలేశాడు. ఇంకా ఎటూ తేల్చుకోలేక, తిరుగుబాటుకు ధైర్యం చాలక బారక్స్‌లోనే ఉండిపోయిన సిపాయిలకు కాళ్లు చేతులు వొణికాయి. ముచ్చెమటలు పోశాయి. నిన్న 85 మందికిలాగే తమకూ యూనిఫాంలు విప్పించి, సంకెళ్లేసి జైలుకు పంపిస్తారన్న పెనుభయం పట్టుకుంది. హడలిపోతూ ఎలా ఉన్నవారు అలా దిక్కుతోచక లైన్సులోకి ఉరికారు.

అప్పటికే 3వ ఆశ్విక దళం రౌతులు శరవేగంగా స్వారీ చేస్తూ తమ సహచరులను విడిపించటానికి చర్చి గంట మోగగానే సివిల్ జైలుకు దూనుకెళ్లారు. అక్కడ వారు కష్టపడవలసిన అవసరం లేకపోయింది. వారిని చూడగానే జైలు సిబ్బంది నంబరంగా తలుపులు తెరిచి జయజయ ధ్వానాలతో నగౌరవంగా ఖైదీలను ఒప్పగించారు. అక్కడికక్కడే కమ్మరివాళ్లను పిలిపించి సంకెళ్లు ఊడగొట్టించారు. విడిపించిన ఖైదీలను గుర్రం మీద వెనక కూచోబెట్టుకుని రౌతులు 'హర హర మహదేవ్' అని నినదిస్తూ ఆనందంగా మిలిటరీ లైన్సుకు తిరిగొచ్చారు.

వారిని చూసేసరికి మిగతా సిపాయిల సంబరానికి పట్టపగ్గాలు లేవు. చెర వీడిన ధీరులను అందరూ ఆప్యాయంగా అక్కున చేర్చుకున్నారు. అప్పటికే 20వ పటాలం వారు ఆయుధాగారం మీద పడి తుపాకులు లాగేసుకున్నారు. వారి పొరుగున ఉండే 11వ పటాలం వారు కూడా పెరేడ్ గ్రవుండ్సులో గుమికూడారు. ఈలోపు వారి కమాండరయిన కర్నల్ ఫిత్నీస్ అక్కడికి చేరుకుని వారిని తీవ్రంగా మందలించాడు. అంతలో అక్కడ ఉన్న 20వ పటాలం సిపాయి ఒకడు మస్కెట్ పేల్చి కెప్టెన్ ఫిన్నిస్‌ను చంపేశాడు. దాంతో – ఆ నేరం తమ మెడకే చుటుకుంటుందనీ, తాము ఊరకున్నా తెల్లదొరలు కక్షగట్టి తమను వేటాడక మానరనీ 11వ పటాలం వారికి అర్థమైంది. ఎలాగూ తెల్లవాళ్లు బతకనివ్వరు కనుక నలుగురితో నారాయణ అని తిరుగుబాటు శ్రేణుల్లో చేరటమే ఉత్తమమని తలిచి, అంతవరకూ ఊగిసలాడిన వారు కూడా తెగించి ఆయుధాలు ఎత్తారు.

పరిస్థితి మహా ఉద్రిక్తంగా ఉంది. చాలా రోజులుగా లోలోన అణచుకుంటూ వస్తున్న బాధ, కోధం కట్టలు తెంచుకుని కొందరు సిపాయిలు వీరభద్రుల్లా చెలరేగి తెల్లవాళ్ల బంగళాలకు నిప్పుపెట్టి విధ్వంసం సాగించారు. గతంలో తమను అవమానించి, సతాయించిన తెల్ల ఆఫీసర్లు కంట పడగానే కొందరు సిపాయిలు 'మారో ఫిరంగీకో' అంటూ కసికొద్దీ చంపారు. అంతా నానా గత్తర.

తిరుగుబాటు మెరపులా లేవటం వల్ల ఇంగ్లీషువాళ్లు ఆదమరచినప్పటికీ, ఇంకొంచెం సేపట్లో వారు తేరుకుని తమ మీదికి రాగలరని సిపాయిలకు తెలుసు. ఆ రోజుల్లో ఇండియాలో ఉన్న యూరోపియన్ బలగాల్లోకెల్లా మీరట్‌లో ఉన్నదే పెద్దది. 1500 మంది యూరోపియన్లతో కూడిన రైఫిల్స్, ఆర్టిలరీ రెజిమెంట్లతో బహు పటిష్ఠమైన కంపెనీ సైనికశక్తికి ఎదురునిలిచే శక్తి తమకు లేదని వారికి ఎరుకే. చిన్నపాటి అవిధేయతకే జాలి లేకుండా రెచ్చిపోయి బేడీలు వేసి బందీఖానాలో వేసిన వారు బహిరంగ తిరుగుబాటును సహిస్తారా ? క్రూరంగా ప్రతిక్రియ చేయక మానుతారా ? ఇంకా ఇక్కడ ఉంటే ప్రమాదం. తెల్ల రాకాసులు కమ్ముకొచ్చే లోపే ఇక్కడి నుంచి బయటపడాలి.

ఔను బయటవడాల్సిందే అన్నారు అందరూ. ఐతే – ఎక్కడికి వెళ్లాలి ?

ఆర్.సి. మజుందార్ లాంటి చరిత్రకారులు తేల్చిన దాని ప్రకారం తిరుగుబాటు మొదలెట్టినప్పుడు సిపాయిలకు ఢిల్లీ వెళ్లాలన్న ఆలోచనే లేదు. అక్కడే నిలవటం ప్రమాదకరం కనుక ఎక్కడికి పోవాలన్న ప్రశ్న వచ్చినప్పుడు తలా ఓమాట అన్నారట. కొందరు రోహిల్‌ఖండ్‌కు పోదామన్నారట. మరికొందరు ఢిల్లీ మేలు అన్నారట. తర్జనభర్జన అనంతరం ఢిల్లీకే పోవాలని అప్పటికప్పుడు నిర్ణయించుకున్నారట.

కాని పూర్వావరాలను, మిగతా సాక్ష్యాధారాలను పరిశీలిస్తే అది చివరిక్షణంలో అప్పటికప్పుడు చేసిన నిర్ణయం కాదని స్పష్టం. మీరట్ తిరుగుబాటుకు చాలారోజులు ముందునుంచే ఏమి చేయాలన్న దానిపై సైనిక పటాలాల్లో రహస్య చర్చలు విస్తృతంగా జరుగుతూ వచ్చాయి. మీరట్‌కు ఢిల్లీ దగ్గర కాబట్టి ఇక్కడ దెబ్బతీయగానే అక్కడికి వెళ్లాలని ముందే నిశ్చయమైంది. కోర్టు మార్షల్‌లో పాల్గొనటం కోసం అధికారిక డ్యూటీ మీద మీరట్ వచ్చిన సందర్భంలో ఢిల్లీ సిపాయి ఆఫీసర్లతో మీరట్ వారికి సంఘీభావం పెరిగింది. ఆరోజు రాత్రి తాము తిరుగుబాటు చేసి ఢిల్లీకి మరల వచ్చునని అక్కడి వారికి తెలియపరచేందుకు మే 10 మధ్యాహ్నమే కొంతమంది సిపాయిలను గుర్రపు బండ్ల మీద రహస్యంగా తరలించారు. వారు ఆ రాత్రికల్లా ఢిల్లీ చేరుకుని అక్కడివారికి ఉప్పందించారు.

మీరట్‌లో అదాటున తిరగబడటమేమిటి, మెరపుదాడి చేసి ఆయుధాలను గుంజుకోవటమేమిటి, జైలు నుంచి సైనిక ఖైదీలను విడిపించుకుని అంతా కలిసి నలభై మైళ్ళ దూరంలోని ఢిల్లీ దారి పట్టటమేమిటి చకచకా జరిగిపోయాయి. చీకటిపడ్డ కొద్ది గంటలకు బ్రిటిష్ అధికారులు తెప్పరిల్లి, కాలూ చెయ్యీ కూడదీసుకుని దండు వెడలే సరికి సిపాయి లైన్లన్నీ ఖాళీగా కనిపించాయి. పిట్టలు ఎగిరి పోయాయి.

అప్పుడైనా ఇంగ్లీషువాళ్లు వెంటనే కదిలి ఆశ్విక దళాలను వరుగెత్తించి ఉంటే తరుముకుని వెళ్లి తిరుగుబాటుదారులను ఢిల్లీ చేరకుండానే అడ్డగించగలిగేవారు. అలా వెంట పడతారేమోనని సిపాయిలు ఢిల్లీ చేరిందాకా భయపడుతూనే ఉన్నారు. కాని – వారి అదృష్టం ! మీరట్‌లో వారు అనూహ్యంగా తీసిన దెబ్బకు తెల్లవారి దిమ్మ తిరిగింది. చేతిలో రైఫిళ్లు, ఫిరంగులు, దౌడు తీసే గుర్రాలు, తమ జాతి సోల్జర్లు దండిగా ఉన్నా చప్పున కదిలి సంక్షోభాన్ని సమర్థంగా ఎదుర్కొనే దక్షత దొరలకు కొరవడింది. పట్టుబట్టి పెరేడ్ పెట్టి సైనికులను పనిగట్టుకుని రెచ్చగొట్టిన కర్నల్ స్మిత్‌గారు తిరుగుబాటు లేచాక అయిపు లేదు. రెజిమెంటును జాగ్రత్తగా చూసుకోమని కింది వారికి చెప్పి బ్రిగేడియర్ దగ్గరికీ జనరల్ కమాండింగు దగ్గరికీ పరుగులెత్తి చివరికి శతఘ్ని దళం రక్షణలో రాత్రంతా అతడు కంటోన్మెంటులో గడిపాడు. ఇక జనరల్ కమాండింగ్ హువిట్ దొర 70 ఏళ్ల ముదుసలి. ఉన్న బలగాలను సమీకరించి ఒడుపుగా కదలటం అతడి వల్ల కాలేదు. మందీ మార్బలాన్ని పోగేసుకుని పెరేడ్ గ్రవుండ్సుకు వెళ్లి ఆ దరిదాపుల్లో సిపాయిలెవరూ కనపడక పోవటంతో వారు ఏమూలో దాక్కుని ఉంటారని హెవిట్ గారు భయపడ్డారు. పౌర ప్రాంతాల్లో ఉండే యూరోపియన్ల మీద దాడికి వెళ్లారేమో, అలగా జనాన్ని కూడగట్టుకుని మళ్లీ కంటోన్మెంటుకు తిరిగొచ్చి ఖానీలకు, దొమ్మీలకు దిగుతారేమోనని ఆయనగారు ఊహించాడు. అక్కడక్కడ కొని పికెట్లను మాత్రం పెట్టించి సిపాయిలు చేయబోయే దాడిని ఎదుర్కోవడానికి రాత్రంతా దాదాపుగా బలగాలన్నిటినీ యూరోపియన్ పెరేడ్ గ్రవుండులో ఆరుబయట అట్టిపెట్టాడు. ఒకవేళ వాళ్లు ఢిల్లీ వైపు పారిపోయారేమో, చూసి రమ్మంటారా అని కార్బయిన్స్ దళం కెప్టెను అడిగితే పై అధికారులు అక్కర్లేదు ఊర్కో అన్నారు.

అజేయమని, దుర్నిరీక్ష్యమని అనుకున్న బ్రిటిష్ సైనిక మహాశక్తికి సిపాయిలు కొట్టిన దెబ్బతో నమ్మశక్యం కానంతటి పక్షవాతం కమ్మి, దిక్కు తోచక చేష్టలుడిగి ఉండటం అసాంఘిక శక్తులకు అయాచితవరమైంది. ఆ రాత్రి మీరట్‌కు కాళరాత్రి. సిపాయిల తరవాత వందల సంఖ్యలో కరకు నేరగాళ్లూ జైలునుంచి తప్పించుకుపోయారు. వారిలో బందిపోట్లూ, గజగొంగలూ, గూండాలూ, నెత్తురుతాగే ఖూనీకోర్లూ ఎందరో ఉన్నారు. అడ్డగించే వారు లేకపోవడంతో వారు విజృంభించి ఆవురావురు మంటూ మిలిటరీ, సివిలు ప్రాంతాల మీద పడ్డారు. స్థానికంగా ఉన్న సంఘ వ్యతిరేక శక్తులు వారికి తోడయ్యాయి. దోపిడీ, దొమ్మీ విద్యల్లో చేయి తిరిగిన కులస్థులు సంగతి తెలియగానే చుట్టుపట్ల ఊళ్లనుంచి వచ్చి పడ్డారు. నగర పోలీసుల్లోనూ కొందరు వారితో చేతులు కలిపారు.

ఇలా చీకటి శక్తులన్నీ ఒక్క పెట్టున చెలరేగి మీరట్‌ను దోచుకుని, అడ్డొచ్చిన వారినల్లా హతమార్చి, ఇళ్లూ ఆస్తులూ సర్కారీ భవంతులూ తగులబెట్టి తెల్లవార్లూ భయానక భీభత్సం సాగించారు. పోలీసు కమిషనర్ గ్రేట్‌హెడ్ దొరే అల్లరిమూకలకు భయపడి భార్యాబిడ్డలతో సాగించారు. పోలీసు కమిషనర్ గ్రేట్‌హెడ్ దొరే అల్లరిమూకలకు భయపడి భార్యాబిడ్డలతో మిద్దెమీద దాక్కున్నాడు. అటుకేసి వచ్చిన గుంపు కొంచెం ఉంటే ఆ ఇంటికి నిప్పంటించేదే. కాని ఇంట్లో పనిచేసే నౌకరు స్వామిభక్తి చూపి, తన యజమాని వేరే చోటికి పోయాడని గుంపుకు నచ్చచెప్పి పంపించటంతో కొత్వాలు కుటుంబం క్షేమంగా బయటపడింది.

కాని అంత అదృష్టం చాలామందికి లేకపోయింది. ముఖ్యంగా యూరోపియన్ల బంగళాల మీద పడి... భర్త డ్యూటీపై పోవటంతో ఒంటరిగా ఉన్న దొరసానులను నరికేసి, తల్లుల కళ్లముందే పిల్లల్ని చంపి, దుండగులు అందిందల్లా దోచుకుపోయారు. మిసెస్ చాంబర్స్ అనే దొరసానినైతే నెలలు నిండిన గర్భిణి అనే కనికరం కూడా లేకుండా కిరాతకంగా నరికేశారు. తెల్లవారేసరికి ఎక్కడ చూసినా పీనుగుల పోగులు; కాలిన ఇళ్లు; కూలిన బతుకులు; ఎటు చూస్తే అటు నరరూప రాక్షసుల పదఘట్టనల జాడలు. సర్వత్రా ఆక్రందనలు; గుండెలవిసేలా శాపనార్థాలు.

ఆ రాత్రి మీరట్‌లో జరిగింది నిస్సందేహంగా నాగరిక సమాజానికి సిగ్గుచేటు. తిరుగుబాటు లేచిన వెనువెంటనే చెలరేగినా దానికీ తిరుగుబాటుకూ వాస్తవానికి సంబంధం

లేదు. అప్పటి ఘోరకలికంతటికీ సిపాయిలే బాధ్యులని చరిత్రలు రాసిన పెద్దలు చాలామంది నిర్ధారించారు. సిపాయిలే స్వయంగా ఊచకోతలు జరిపారని కొందరు దొరలన్నారు. తోటి సిపాయిలతోబాటు జైల్లోని మిగతా ఖైదీలను కూడా వారే విడిపించి ఊరిమీదికి తోలారు కనుక అసాంఘిక శక్తుల ఆగడాలకు వారిదే బాధ్యత అని మరికొంద రన్నారు. సిపాయిలను తిరుగుబాటుకు ప్రేరేపించిన కుట్రదారులే పథకం ప్రకారం భయంకరమైన అల్లర్లు సృష్టించారనీ, అదంతా ఒకే కుట్రలో భాగమని ఇంకొందరు వాదించారు. ఆఖరికి జాతీయవాది సావర్కర్ కూడా అదే మాట అన్నాడు. ఆదివారం చర్చి గంట మోగగానే తిరగబడి కనిపించిన తెల్లవాళ్లనల్లా స్త్రీ పురుష వివక్షణ లేకుండా, చిన్నపిల్లలను కూడా వదలకుండా నరికి పారెయ్యాలని తిరుగుబాటు సూత్రధారులు ముందే నిర్ణయినిచారని, ఆ వ్యూహంలో భాగంగా వేలాది మీరట్ వాసులు, చుట్టుపట్ల గ్రామస్తులు కట్టెలు, కత్తులు, గొడ్డళ్లు పట్టుకుని ఇంగ్లీషువాళ్లను నరికిపోగులు పెట్టటానికి మధ్యాహ్నం నుంచే కాచుకుని ఉన్నారని సావర్కర్ ఉవాచ. 'మారో ఫిరంగీకో' అంటూ సిపాయిలు చేతికిచిక్కిన ఇంగ్లీషు వాళ్లనల్లా చంపి, వారి శవాలను కనితీరా కాళ్లతో తన్నారనీ, ప్రతీకారం పనిని పూర్తిచేసే బాధ్యత ఊరివాళ్లకు అప్పగించి తాము నిర్ణయించుకున్న ప్రకారం ఢిల్లీకి కదిలారని కళ్ళతో చూసినట్టు సావర్కర్ చిత్రించటం జనాన్ని ఉద్రేక పరచటానికి, వీరావేశం ప్రకోపింప చేయటానికి అప్పట్లో ఏమైనా పనికొచ్చిందేమో. కాని ముష్కర మూకల పైశాచిక దుష్కృత్యాలను సైతం వీరోచిత ప్రతాపంలా తెలిసో తెలియకో చిత్రించటం వల్ల జాతీయ మహా విప్లవానికి తీరని అప్రతిష్ఠ వచ్చింది. తిరుగుబాటు ఆదిలోనే అమానుష హింసతో, స్త్రీలూ పిల్లల బలితో, రాక్షస విధ్వంసం తలెత్తడం వల్ల దానంతటినీ తిరుగుబాటు పద్దుకు ఖర్చురాసి, మొత్తం పోరాటాన్ని అరాచకశక్తుల భీభత్సంగా దానికి గురిఅయిన ఆంగ్లేయులేమో శాంతి, భద్రతల ఉద్ధారకులుగా చూపెట్టి తెల్లవారు అతి తెలివిగా తిమిమ్మని బమ్మి చేశారు. వారి మాటలు నమ్మి, నికృష్టపు హత్యాకాండకు ఒడిగట్టారన్న దురభిప్రాయంతో తిరుగుబాటు వీరులను సిసలైన దేశభక్తులు కూడా చిన్న చూపు చూశారు.

కాని వాస్తవం వేరు. ఆగడం చేసిన అసాంఘిక శక్తులను జైలు నుంచి విడిపించిన పాపం సిపాయిలది కాదు. వారు దర్జాగా వచ్చి, శృంఖలాలు పగులగొట్టి తీసుకు పోయింది 85 మంది సహచరులను మాత్రమే. వారు ఢిల్లీ దారిపట్టిన చాలాసేపటికి, అర్ధరాత్రి 2 గంటల తరువాత ఊరి జనం జైలుపై పడి 939 మంది ఖైదీల్ని విడిపించుకుపోయారు. అనంతరం సర్కారీ విచారణలో ***James Doorit*** అనే ఆంగ్లేయుడిచ్చిన సాక్ష్యమే (***Depositions*** *No. 21, PP 14-15*) ఇందుకు రుజువు. తిరుగుబాటుదారులు పరారైన చాలా గంటల తరవాత కూడా శాంతిభద్రతలను కాపాడలేక జైలును అల్లరి మూకలపాలు కానిచ్చిన కంపెనీ సర్కారే నేరస్థులు తప్పించుకుపోవటానికి మొదటి ముద్దాయి. వారి అఘాయిత్యాలను అడ్డుకోలేక చతికిల పడడమూ దొరవార్ల వైఫల్యమే.

అల్లరి గుంపుల దాడికి ప్రధానంగా గురైంది డాబుగా కనిపించే యూరోపియన్ల బంగళాలు. వాటిలో విలాసంగా బతికే దొరలూ, దొరసానులే అయినప్పటికీ గూండాల తండాలకు స్వదేశీ, విదేశీ తారతమ్యం లేదు. పలువురు పౌరులు, దేశీయ పురప్రముఖులు కూడా విధ్వంసకాండకు గురి అయ్యారు. దారినపోయే కొందరు భారతీయులు సైతం యూరోపియన్లలాగే దారిదోపిడీలకు, విచ్చలవిడి హత్యలకూ బలి అయ్యారు. బాబు బీర్‌బల్ అనే పెద్దమనిషి ఇల్లు, బెంగాలీ బాబు కైలాస్ చంద్ర ఘోష్‌కు చెందిన వైన్‌షాపు మంటల్లో బుగ్గి అయ్యాయి. దీన్నిబట్టి ఊరి జనమంతా కలిసి ఇంగ్లీషు వాళ్ళను మాత్రమే పగబట్టి వేటాడారనటం శుద్ధ తప్పు.

నేరగాళ్ల గుంపులు చేసిన దానికి దేశభక్తిని, విదేశీ వ్యతిరేకతను ఆపాదించటం తప్పయినట్టే - తిరగబడ్డ సిపాయిలు తెల్లవారిపై రక్షతో మూకుమ్మడిగా నానా ఆగం చేశారనడమూ సరికాదు. *The men did not attack us, but warned us to be off shouting that the Company's Raj was over for ever.* (కంపెనీ రాజ్యానికి రోజులు చెల్లాయని చెప్పి, మమ్మల్ని వెళ్లిపొమ్మని హెచ్చరించారే తప్ప వాళ్లు మాపై దాడి చేయలేదు) అని కర్నల్ మెకంజీ ***Mutiny Memoirs*** గ్రంథం 13వ పేజీలో స్పష్టంగా చెప్పాడు.

Before they left, two sipahis of 11th N.I. had escorted two ladies with their children to the Carabineer barracks. They had then rejoined their comrades.

(వెళ్లబోయే ముందు 11వ పదాతి దళానికి చెందిన ఇద్దరు సిపాయిలు ఇద్దరు దొరసానులను, వారి పిల్లలను కార్బయినర్ బారక్స్‌కు క్షేమంగా చేర్చారు. ఆ తరవాత తమ నేస్తాలతో వెళ్లి కలిశారు) అని ***The Indian Mutiny of 1857*** గ్రంథం 49వ పేజీలో *G.B. Malleson* రాసింది చదివితే తిరుగబాటు దారులు ఎంతటి సంస్కారంతో వ్యవహరించిందీ అర్థమవుతుంది.

అనంతర కాలంలో విక్టోరియా క్రాస్ పతకం పొందిన లెఫ్టినెంట్ సర్ హ్యూగ్ గౌగ్ పక్కా ఆంగ్లేయుడు. అతని చేతికింద పనిచేసే నేటివ్ ఆఫీసరు - తమ వాళ్లు జైలు బద్దలుకొట్టి ఖైదీల్ని విడిపించేట్టున్నారని కిందటి రోజే అతడి చెవిన వేశాడు. ఆ సంగతి గౌగ్ వెళ్ళి కర్నల్ స్మిత్‌కు చేరవేస్తే అతగాడు నమ్మక కొట్టి పారేశాడు. ఆదివారం సాయంత్రం తిరుగు బాటు మొదలు కాగానే మళ్లీ ఆ ఆఫీసరే ఇద్దరు ట్రూపర్లతో గౌగ్ ఇంటికి వెళ్లి విషయం చెప్పి జాగ్రత్తగా ఉండమన్నాడట. అతణ్ని వెంట ఉండి అక్కణ్నించి తీసుకుపోయి, దారిలో కర్రలు, కత్తులు పట్టిన బజారు మూకలు అటకాయిస్తే ముగ్గురు నేటివ్‌లూ అడ్డుపడి కాపాడి తమ కమాండరును క్షేమంగా ఆర్టిలరీ మెస్సుకు చేర్చి, ఇక మాకు సెలవిప్పించండ న్నారట.

"Gough did all he could to persuade them to remain with him, but to no purpose. They told him it was impossible for them to separate themselves from their friends and relations, and making the officer they had so carefuly protected a respectable Salaam, they rode off to join their nutinous comrades. Gough never heard of them again."

[Field Marshal Lord Roberts, *An Eyewitness Account of The Indian Mutiny,* P.49]

తనతోనే ఉండిపొమ్మని వారికి గౌగ్ ఎంత నచ్చచెప్పినా ప్రయోజనం లేకపోయింది. తమ బంధుమిత్రుల నుంచి వేరు పడటం తమవల్ల కాదని చెప్పి, తాము జాగ్రత్తగా రక్షించిన ఆఫీసరుకు వినయంగా సలాంచేసి పోయి తిరుగుబాటు శ్రేణుల్లో కలిసిపోయారు. గౌగ్‌కు మళ్లీ వారి జాడ తెలియలేదు - అని ప్రత్యక్ష సాక్షి ఫీల్డ్‌మార్షల్ లార్డ్ రాబర్ట్స తన సుప్రసిద్ధ గ్రంథంలో పేర్కొన్నాడు. తిరగబడిన సమయంలో సిపాయిలు ఎగబడి తెల్లవాళ్ల గొంతులు కోశారో, మానవతకు, కట్టుబాటుకు విలువ ఇచ్చి నియమబద్ధంగా మెలిగారో పోల్చుకునేందుకు ఈ ఉదంతం ఒక్కటి చాలదా?

భగవద్గీతోపన్యాసములు

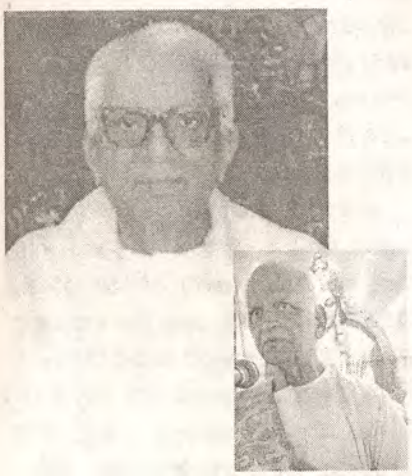

పండిత గోపదేవ గారి ఉపన్యాసములను లేఖబద్ధం చేసిన
రచయిత : పండిత చెలవాది సోమయ్య

విదేశీ చరిత్రకారులు మానవులలో చాల జాతులున్నాయనడం సరికాదు :-

గత దినం మనం ప్రాసంగికంగా ఈనాడు. హిందువులనబడే మనం హిందువులం కామని, మనం ఆర్యులమని, అలాగే శాస్త్రాలు చెబుతున్నాయని చెప్పుకున్నాం. మన దేశ చరిత్రలు వ్రాసినది యితర దేశాల వారు. వాటినే మన కాలేజీల్లోనూ, పాఠశాలల్లోను పిల్లలకు బోధించుతున్నాం. ఈ చరిత్రకారులు మానవులల్లో చాల జాతులున్నాయని తలంచారు. ఆర్యులు, ద్రావిడులు, హూణులు, మంగోలులు అని మానవులలో జాతి భేదం ఎంచారు. గుండ్రని ముఖం గల వారొక జాతి అని, నల్లని వారింకొక జాతి అని, తెల్ల వారొక జాతి అని, పొట్టి వాళ్ళు యింకొక జాతి అని యిలా మానవులను భిన్న భిన్న జాతులుగా చిత్రించారు. వాస్తవానికి మానవులంతా ఒకే జాతి. వారు గుణభేదాలను బట్టి, వారు చేసే పనులను బట్టి భిన్న వర్ణస్థులుగా ఎంచబడినప్పటికి అందరం మనుష్యలం.

ఆర్య పదం అందరికీ వర్తిస్తుంది :-

ఆర్య పదం అందరికీ వర్తిస్తుంది. జర్మన్లు, వారి నాయకుడైన హిట్లరు కూడ తమ్ముతాము ఆర్యులమని చెప్పుకోడానికి గర్వించే వారు. వైదికులకు హిందూపదం బలవంతంగా అంటగట్టబడిందని నిన్న చెప్పాను. చంద్రగుప్తుని కాలంలో 'హ్యూ యన్ సాంగ్', 'పాహియాసన్' అనే వారు చైనా దేశం నుండి మన దేశానికి యాత్రికులుగా వచ్చారు. వారు భారతదేశాన్ని గురించితీ తమ గ్రంథాలల్లో వ్రాశారు. అప్పటి భారతీయులను విదేశస్థులెవరైనా హిందువులంటే ఒప్పుకొనేవారు కారని, ఆర్యులంటే అంగీకరించే వారని వారు చైనా భాషలో వ్రాశారు. ఆగ్రంథాలు ఇంగ్లీషులోనికి, హిందీలోనికి అనువదింప బడినాయి. అవి చదివితే మనకిది తెలుస్తుంది. అందుచేత మనం ఆర్యులుగా పిలవబడడం ఉచిత మౌతుంది. కనీసం మన లోకసభ నిర్ణయాన్ని బట్టి మనం ఒక ముందు మన దేశం భారతదేశమని, మనం భారతీయులమని చెప్పుకొనుట మిక్కిలి బాగుంటుంది. అందుకు విరుద్ధంగా మనం హిందువులమని చెప్పుకొనుట రాజ్యాంగ విరుద్ధం కూడ. ఈ విషయాన్ని విశ్వహిందూ పరిషత్తు వారేల గమనించకున్నారో దురూహ్యం.

దుఃఖ భరితుడైయున్న అర్జునుణ్ణి చూచి కృష్ణడంటున్నాడు, అర్జునా ! ఆర్యులకు తగనటు వంటి యీ మనోమాలిన్యం నీకు ఎక్కడి నుండి వచ్చింది ? ఇది పిరిగి పందలలో ఉండ వలసింది. క్షుద్రమయిన యీ హృదయ దౌర్బల్యం విడిచి, 'ఉత్తిష్ఠ పరంతప' - యుద్ధం చెయ్యడానికిలే, నీపేరెత్తి తేనే శత్రువులు తపించిపోతారు. నీవు శత్రు తాపకుడవు అన్నాడు. కాని ఈమాటలకు అర్జునుని వ్యామోహం తొలగిట్లు కనబడలేదు, అర్జునుడంటున్నాడు.

కథం భీష్మమహం సంఖ్యే ద్రోణం చ మధుసూదన।
ఇషుభిః ప్రతియోత్స్యామి పూజార్హావరిసూదన ॥
గీత.2-4.

అరిసూదన ! భీష్ముడు తాత ద్రోణుడు గురువు. వారు పెద్దలు, పూజింపదగిన వారు అట్టి వారిని యుద్ధంలో బాణాలతో కొట్టి నొప్పించడం తగునా ? ఇచట కృష్ణునికి 'అరిసూదనా' అనే పేరు వాడాడు వ్యాసుడు. అరిసూదనా అంటే శత్రువులను నశింపజేసిన వాడా అని అర్థం. కృష్ణా నీవు శత్రువులను నాశనం చేశావు. కాని నన్ను బంధువులనే చంప మంటున్నావు. ఇదేం న్యాయం చెప్పు అని అంటున్నాడు అర్జునుడు.

గురూనహత్వా హి మహానుభావాన్ ।
శ్రేయో భోక్తుం భైక్ష్యమపీహ లోకే ॥
హత్వార్థ కామాంస్తు గురూనిహైవ ।
భుంజీయ భోగాన్ రుధిర ప్రదిగ్ధాన్ ॥
గీత.2-5.

మహానుభావులైన గురువులను చంపడం కంటె భిక్షాటనం చేసి బ్రతకడం మేలు కదా ? కాకుంటే, వీరిని చంపనిందువల్ల యింత సిరి సంపదలు, ధనధాన్యాదులు కలుగుతాయి. పురుషార్థాలలో అర్థం, కామం యివి రెండు నెరవేరతాయి. అంతేకాని యిది ధర్మంగా నాకు కనబడడం లేదు. దీని వల్ల ముక్తి అంతకంటె సిద్ధించదు. గురువుల రక్తంతో సినిచితమైన - తడుపబడిన యీ రాజ్యభోగాల ననుభవించడమే కదా దీని వల్ల ఫలం ? అన్నాడు అర్జునుడు. తాను యుద్ధంలో జయిస్తాను అని యినితవరకు తన శక్తి సామర్థ్యాల మీద నమ్మకం ఉంది అర్జునునికి, అది యిప్పుడు క్రమంగా సడలుతున్నట్లు దీని తరువాత శ్లోకంలో చదువుతాం.

న చైతద్విద్మః కతరన్నో గరీయో
య ద్వా జయేమ యది వా నో జయేయుః ॥
స్తేఽవస్థితాః ప్రముఖే ధార్త రాష్ట్రాః॥గీత.2-6

అయినప్పటికి కృష్ణా, మనలను వారు జయిస్తారో, లేక వారిని మనం జయిస్తామో తెలియదు కదా ? అని తన అసమర్థతను వెల్లడించి, మళ్ళీ గ్రుక్క త్రిప్పుకొని కృష్ణుడేమైన తనను అనమర్థుడను కుంటాడేమోనని శంకించినవాడై అర్జునుడు, ఎవరిని చంపి జీవించడం మనకు యిష్టము లేదో అటువంటి దుర్యోధనాదులే మన ఎదుట ఉన్నారు కదా వారి నెలా చంపమ్మటావు కృష్ణా ! అన్నాడు.

కార్పణ్య దోషోప హత స్వభావః ।
పృచ్ఛామి త్వాం ధర్మసమ్మూఢ చేతాః ।
య చ్ఛ్రేయస్స్యాన్నిశ్చితం బ్రూహి తన్మే ।
శిష్యస్తే ఽహం శాధి మాం త్వాం ప్రపన్నమ్॥
గీత.2-7

కృష్ణా ! కార్పణ్య దేషం చేత నామనస్సు చెడిపోయింది. నేను యిప్పుడు కర్తవ్యం ఏదో కర్తవ్యం కానిదేదో ఆలించించలేని మందబుద్ధి నయ్యాను. కనుక ఏది చేస్తే మంచిదో నీవే నిశ్చయించి చెప్పు. నేను శిష్య భావంతో నిన్ను

అర్థిస్తున్నాను. నీశరణుజొచ్చుతున్నాను. నీవు ఎలా అజ్ఞాపిస్తే అలా చేస్తాను అన్నాడు. అర్జునుడు.

కృపణుడంటే ఎవరు ? :-

'కార్పణ్యదోష' మనేమాట ఈశ్లోకంలో వచ్చింది. కార్పణ్య దోషమంటే-కృపణత-సామాన్య భాషలో చెబితే లోభి తనము లేక పిసినారి తనమని అర్థం. మరి అర్జునునిలో లోభితనం లేదు. ఎందుచేత యిక్కడ యీ పదం వాడబింది. కార్పణ్యం అనే దానికి శాస్త్రీయ భాషలో చెప్పవలసి వస్తే, తన్ను తాను తెలుసుకోకపోవడం అని అర్థం. ఏమనుష్యుడైతే తానంటే ఏమిటో తెలుసుకోకుండా ప్రైతి - చచ్చిపోతాడో వాడు కృపణుడైతాడు. **'య ఏనం అవిదిత్వా ప్రైతి స కృపణః'** - తన్ను తాను తెలుసుకొనని వాడు తానేది చేయాలో నిశ్చయించుకో లేడు. తన్ను తాను తెలిసి కొన్నవాడు తాను జీవితంలో ఏది సాధించాలో ఒక నిర్ణయానికి రాగలుగుతాడు. ఆలక్ష్య సాధనకు అతడు పూర్ణమనస్సుతో ప్రయత్నించి సాధిస్తాడు.

ఇప్పుడు అర్జునునిలో తాను ఏది చెయ్యాలో నిర్ణయించుకొనే శక్తి లేదు. అందుచేత కృష్ణా ! నీవే నిర్ణయించి ఏది శ్రేయస్కరమో చెప్పు అన్నాడు. 'ధర్మసమ్మూఢ చేతః' - అంటే ధర్మ విషయంలో మౌఢ్యం వహించిన చిత్తం అని అర్థం. ఇంతకు ముందొక రోజు ధర్మాన్ని గురించి చెప్పాను. ఏపని చేస్తే పరిణామంలో సుఖాన్ని కలిగిస్తుందో అది ధర్మం. తనకు గాని యితరులకు గాని మేలు కలుగక పోగా కీడు కలిగించేది అధర్మం అనబడుతుంది.

శిష్యుడంటే :-

'శిష్యస్తే అహం' - శిష్యుడంటే శాసించదగిన వాడు. ఆజ్ఞను ఉల్లంఘించకుండా ఒప్పుకునే వాడు, చెప్పినది చేసేవాడు అని అర్థం. పూర్వం గురుకులాల్లో గురువులు విద్యార్థులకు ఏదైనా చెబితే వాళ్ళు చెప్పినట్లు నడుచుకొనేవారు.

ఇతవరకు అర్జునుడు తాను రథికుడనని, కృష్ణుడు సారథి అని అనుకున్నాడు. అందుకనే మొదట్లో 'నారథాన్ని ఇరుసేనల మధ్యలో పెట్టు' అన్నాడు కృష్ణుణ్ణి. కాని యిప్పుడు పరిస్థితి మారింది. అతనిలో శిష్యభావం కలిగింది. 'నన్ను ఆజ్ఞాపించు, నేను నీకు శరణుజొచ్చుతున్నాను, నీవు ఎలా ఆజ్ఞాపిస్తే అలా చేస్తాను' అంటున్నాడు అర్జునుడు. ఈ భావాన్నే వైష్ణవ సంప్రదాయకులు 'ప్రపత్తి' అంటారు. ఇది ఒక రకం భక్తి.

భక్తి అంటే ఏమిటి ? :-

అసలు భక్తి అంటే ఏమిటి ? చిన్న వాళ్ళు పెద్దవాళ్ళ యెడల చూపించే ప్రేమను (గౌరవాన్ని) భక్తి అంటారు. పెద్ద వాళ్ళు తమ కంటె చిన్న వాళ్ళపై చూపించే ప్రేమను కరుణ, దయ అంటారు. తమతో సమవయస్కుల యెడల చూపించే ప్రేమను ఇంగ్లీషులో చెబితే ప్రేమ (Love) అంటారు. ప్రపత్తి భక్తినే దాస్యభక్తి అని కూడ అంటారు. ఈభక్తి గల భక్తుడు భగవంతునికి తన్నుతాను. ఆత్మార్పణం చేసుకుంటాడు. తాను స్వతంత్రించి ఏదీ చెయ్యడు, 'భగవన్ష నాదేమీ లేదు అంతా నీదే' నంటాడు. తనలో అహంభావం బొత్తిగా లేకుండా చేసుకుంటాడు. అలాగే అర్జునునిలో కూడ యిప్పుడు అహంభావం పోయి శిష్యభావం వచ్చింది. 'నేను నీ శరణు జొచ్చుతున్నాను. నీవు ఎలా చెబితే అలా చేస్తాను అంటున్నాడు.

న హి ప్రపశ్యామి మమాపనుద్యాద్
యచ్ఛోక ముచ్ఛోషణ మింద్రియాణామ్ ।
అవాప్య భూమావసపత్న మృద్ధం
రాజ్యం సురాణామపి చాధిపత్యమ్॥గీత.2-8

కృష్ణా ! ఇప్పుడు దుఃఖమగ్నుడనైన నాకు ఇంద్రియాలలో శక్తి లేదు. ఈశోషణం ఎలా పోతుందే తెలియడం లేదు. 'ఎందుకు పోదు, యుద్ధం చేసి కౌరవులను జయించితే పోతుంది కదా అంటావా ? నాకు ఈభూమి అంతా స్వాధీనమై సర్వసంపదలు లభించినప్పటికిని, దేశంలో నాకు శత్రువులు లేనప్పటికిని, రాజ్యం సురాణామపి చాధిపత్యమ్' - దేవతలపై ఆధిపత్య కలిగినప్పటికి నాకీ శోషణ - పీడ పోతుందని అనుకోవడం లేదు' అన్నాడు అర్జునుడు.

సురలు అంటే :-

సురాణాం - సురలు అంటే భూమిపై ఉండే విద్వాంసులు లేక పండితులు. ఆనాటి రాజులు ప్రజలపై ఆధిపత్యం వహించినట్లుగా పండితులైన బ్రాహ్మణులపై తాము ఆధిపత్యం వహించే వారు కారు. వారిని గౌరవ భావంతో చూస్తూ గురువులుగా ఎంచేవారు. అలాంటి వారిపై ఆధిపత్యం కలిగినప్పటికి నాకీ శోషణం - దుఃఖం తగ్గేట్లు లేదన్నాడు అర్జునుడు. ఎప్పుడైతే అర్జునుడు. నేను ఏది చెయ్యాలో నీవే నిర్ణయించి చెప్పమని కృష్ణుణ్ణి అర్థించాడో, అప్పుడు కృష్ణుడు ఆలోచనలో పడ్డాడు, ఏమి చెప్పడమా ? అని.

కృష్ణునికి ఈ యుద్ధంలో ఎక్కువ పాత్ర ఎందుకుంది ?:-

కృష్ణునికి ఈ యుద్ధంలో ఎక్కువ పాత్ర ఉంది. కృష్ణుడు తాను స్వయంగా యీ యుద్ధానికి పూర్వం చాలమంది దుష్టులను కంస, శిశుపాలాదులను చంపాడు. కాని యింకా ప్రపంచంలో దుష్టరాజులనేక మంది ఉన్నారు. దేశంలో ధర్మస్థాపన చెయ్యాలంటే వాళ్ళను కూడ సంహరించడం అవసరం. అందుచేత ఈ యుద్ధంలో వాళ్ళను కూడ సంహరించాలనే ఉద్దేశ్యం కృష్ణుతీకి ఉంది. అటువంటి స్థితిలో అర్జునుడు యుద్ధం చెయ్యనని వెనక్కు తగ్గితే యిక పాండవులలో యుద్ధం చేసే వాళ్ళెవరున్నారు ? మరి తానను కున్నట్లు దుష్టరాజు లెలా హతులౌతారు ? కనుక అర్జునుణ్ణి యుద్ధ సన్నద్ధునిగా చెయ్యడం యిప్పుడు కృష్ణునికి కర్తవ్యం అయింది. పైగా అర్జునుడు శిష్యభావంతో అర్థిస్తున్నాడు కూడ !

'శిష్యస్తే ऽ హం శాధిమాం ప్రపన్నమ్ -2-7.

గురుశిష్య సంప్రదాయం ఎలా ఉండాలి?:-

ఇచట గురుశిష్య సంప్రదాయాన్ని గురించి కొంత వివరిస్తాను. మన భారదేశంలో గురుశిష్య సంప్రదాయం చాల కాలంగా వస్తున్నది. విద్య తెలియని వాడు తెలిసిన వానిని శిష్యభావంతో అర్థించితే తనకు తెలిసిన విద్య అతనికి తెలియజెయ్యాలి. అతడు నమ్ర భావంతో అడిగినపుడు చెప్పాలి. ఇది భారతీయ సంప్రదాయం. జ్ఞానం అనేది మనకు కొంటే వచ్చేది కాదు. మనకది గురువుల ద్వారానే వస్తుంది. లోకంలో ఒకరి ధన, ధాన్యాదులను యింకొకరు దొంగిలించి పొందవచ్చు. కాని ఒకనిలోని జ్ఞానం యింకొకడు దొంగిలించి పొందేది కాదు. పోనీ గురువును కొట్టి, తిట్టి జ్ఞానం సంపాదించుదామంటే అది కొడితే వచ్చేది కాదు. చంపితే అసలు లేకుండా పోతుంది ! మరి అతని నుండి దానిని ఎలా పొందడం ? శిష్యుడైన వాడు గురువును వినమ్రుడై అర్థించి తెలిసికోవాలి. అప్పుడు శిష్యుడు జ్ఞానం పొందడానికి వీలుంది. భారతదేశంలో ఇట్టి గురుశిష్య సంప్రదాయం అనూచానంగా (వినయ విధేయతలతో) వస్తూ ఉంది. కాని పాశ్చాత్యులకు యీ సంప్రదాయం లేదు. మన దేశంలో కూడ యిప్పుడిప్పుడీ సాంప్రదాయం వెళ్ళి తలలు వేసి జుగుస్సా కరంగా మారి ఉంది.

గురువుల వద్ద ఉపదేశం పొందకుండ మానవులు తరించడానికి వీల్లేదని యిప్పటికీ మన వారు భావించుతారు. అర్జునడు శిష్యభావంతో కృష్ణుని అర్థించుతున్నాడు. కృష్ణుణ్ణి అతడు బావగా ఎంచి బావా ! తీదేమిటో చెప్పు అనడ్ లేదు. లేక తాను రధికుడనని కృష్ణుడు సారధి అని ఆజ్ఞాపించడం లేదు. అర్జునుడు శిష్యుడుగా వినమ్రుడై అర్థించు తున్నాడు. ఇచట మనకు గురుశిష్య సాంప్ర దాయం కనబడుతుంది. శిష్యభావంతో అర్థించని వానికిచెబితే అది వంటపట్టదు. అందుచేత ప్రాచీన ఋషులు తమ వద్దకు వచ్చి అర్థించే వారికే ధార్మిక విషయాలు చెప్పేవారు.

తద్విజ్ఞానార్థం స గురుమేవాభి గచ్ఛేత్,
సమిత్పాణిః శ్రోత్రియం బ్రహ్మనిష్ఠమ్ ॥

ముండక ఉపనిషత్తు

ఆత్మ విజ్ఞానం కోరిన శిష్యుడు సమిధను చేతనుంచుకొని గురువును వెతుక్కుంటూ పోవాలి. ఆగురువు శ్రోత్రియుడు బ్రహ్మనిష్ఠుడు అయి ఉండాలి.

విజ్ఞానం కోరిన శిష్యుడు గురువు వద్దకు తను వెళ్ళాలి. అంతేగాని గురువు అతని వద్దకు వెళ్ళకూడదు. పూర్వం శిష్యులు గురువు వద్దకు విజ్ఞానార్జనకు వెళ్ళే ముందు సమిత్పాణిః - చేతిలో సమిధలు తీసుకొని వెళ్ళేవారు. సమిధలు అంటే - అగ్ని హోత్రంలో వేసే పుల్లలు. అగ్నిహోత్రంలో అన్ని రకాల పుల్లలను వాడరు. (మామిడి, రావి, మోదుగ, జమ్మి మొదలైన) కొన్ని ఓషధులకు చెందిన పుల్లలనే వాడతారు. అటువంటి సమిధలు శిష్యులు తీసికొని గురువు దగ్గరకు వెళ్ళి, స్వామీ, నాకు విద్య నేర్పవలసినదని ప్రాధేయపడి అడిగి ప్రశ్నించి తెలుసుకునే వారు. పూర్వం గురువులు నిత్యం అగ్నిహోత్రం చేస్తుండేవారు. అందుకు కావలసిన సమిధలను శిష్యులు చేకూర్చేవారు. ఈభావానే **'సమిత్పాణి'** అనే పదం తెలుపు తుంది.

గురువు శ్రోత్రియుడు, బ్రహ్మనిష్ఠుడు కావాలి:-

ఎప్పుడైనా గృహస్థులు బ్రహ్మ విద్య కావాలని అటువంటి గురువుల దగ్గరకు వెళ్ళితే 'సంవత్సరం బ్రహ్మచర్యం వస' - సంవత్సరకాలం బ్రహ్మచర్యము పాలించు, తరువాత విద్య చెబుతామనే వారట. ఒక సంవత్సరం బ్రహ్మచర్యం ఉంటే అప్పటికి బుద్ధిస్థిరపడుతుంది. బుద్ధులుగా కనబడితే వారిని, **'ద్వాదశ వర్ష పర్యంతం బ్రహ్మచర్య వ్రతం చర'** - 12 సంవత్సరాలు బ్రహ్మచర్యం ఉండమనే వారట ! **'తద్విజ్ఞానార్థం** - విజ్ఞాన మంటే ఆత్మ విషయక జ్ఞానం లేక సూక్ష్మ విషయక జ్ఞానం అని అర్థం. ఇప్పుడు విజ్ఞానమనే పదం 'సైన్సు' (Science) కు ఎక్కువగా వాడుతున్నారు. శాస్త్రీయంగా చెప్పాలంటే 'సైన్సు' (Science) ను విజ్ఞానం అనకూడదు. దానిని భౌతిక జ్ఞానం అనాలి. ఆనాటి విద్యార్థులు కూడ, సామాన్యులయిన గురువులను ఆశ్రయించే వారు కాదు. బాగా అన్ని శాస్త్రాలు చదివి తెలిసిన వారినే ఆశ్రయించేవారు. ముఖ్యంగా గురువు అయిన వారికి రెండు లక్షణాలుండాలి. మొదటిది, అతడు శ్రోత్రియుడుగా ఉండాలి. శ్రోత్రియుడంటే వేదాలు తెలిసినవాడని అర్థం. పూర్వం మనవాళ్ళు వేదాలను విని నేర్చుకునే వారు. అందుచేతవాటిని శ్రుతులు అన్నారు. శ్రుతులలో యోగ్యుడు గనుక. శ్రోత్రియుడు అనబడతాడు. తరువాత గురువుకు ఉండ వలసిన లక్షణం బ్రహ్మనిష్ఠ - గురువు వేదాది శాస్త్రాలల్లో ఆరితేరిన వాడే కాకుండా బ్రహ్మయందు నిష్ఠ కలవాడుగా కూడ ఉండాలి. అంటే అతడు పరమాత్మను పొందడమే జీవిత ధ్యేయంగా ప్రయత్నం చేసేవాడుగా ఉండాలి. అంటే అతడు పరమాత్మను పొందడమే జీవిత ధ్యేయంగా ప్రయత్నం చేసేవాడుగా ఉండాలి. శిష్యుడు అటువంటి గురువును చేరి, ప్రశ్నించి, అతడు చెప్పేది శ్రద్ధగా విని జ్ఞానం పొందాలి. ఇది పూర్వపు మన సంప్రదాయం. ఇప్పుడు అదిపోయింది. గురువు గారి పాదాలు పట్టితేనే మోక్షం వస్తుందనుకుంటున్నారు. చాలమంది. చదువురాని వాణ్ణి చదువువచ్చిన వాడు కూడ గురువుగా భావించి పాదాలు పడుతున్నాడు. గురువు అంటే అర్థమేమిటి ? ఉపదేశించేవాడని అర్థం. ఆ ఉపదేశం కూడ ఆధ్యాత్మికమైనదిగా ఉంటేనే గురువు అవుతాడు. మామూలు చదువులు చెప్పేవాళ్ళు గురువీలు కారు. వారిని శిక్షకులనాలి. ఈనాడు గురువులమని చెప్పే వారిలో వేదాలు చదివిన వాళ్ళే లేరు ! ఇక బ్రహ్మనిష్ఠులని చెప్పదగిన వాళ్ళు ఎక్కడున్నారు?

గురువు త్రిమూర్తుల స్వరూపమా ?

గురూపదేశంలోని 3 మెట్లు ఏమిటి ?:-

ఎవరైనా ఉపదేశం చెయ్యమని వెళ్ళితే, యిప్పటి గురువులు, మొదట తానే దేవుణ్ణని చెప్పి శిష్యునికి బోధిస్తాడు.

గురువే బ్రహ్మ, విష్ణువు, ఈశ్వరుడు, గురువు సాక్షాత్తుగా పరబ్రహ్మనట ! మీరంటుంటారు బ్రహ్మ అంటే సృష్టించేవాడని, విష్ణువు పోషణ కర్తని, శివుడు లయకారుడని. మరి ఈ గురువు బ్రహ్మ అయితే, ఎవరిని పుట్టించాడు ? ఒకళ్ళిద్దరు పిల్లల్ని పుట్టించా డేమో కాని, గురువు బ్రహ్మ అయితే, ఎవరిని పుట్టించాడు ? ఒకళ్ళిద్దరు పిల్లల్ని పుట్టించాడేమో కాని, యీ ప్రపంచాన్ని ఆయన సృష్టించాడా (సభలో నవ్వులు) తరువాత గురువు విష్ణువట ! అంటే పోషణ కర్త అన్నమాట. ఎవరిని పోషిస్తున్నాడీయన ? తనకు శిష్యులు తెచ్చిపెడితే గాని బ్రతుకలేడు. గురువు శివుడట - అంటే లయం చేస్తాడని. ఈయన ప్రపంచాన్ని గాని బ్రతుకలేడు. గురువు శివుడట - అంటే లయం చేస్తాడని. ఈయన ప్రపంచాన్ని లయం చెయ్యగలగుతాడా ? ఇవేవీ చేయలేడు. కాని శిష్యుల ధనమానాలు లయంచేస్తాడు. ఇతడు బ్రహ్మ విష్ణు మహేశ్వరుడెలా అవుతాడు ? ఇలా తాను బ్రహ్మ, విష్ణు, ఈశ్వర స్వరూపుడనని మొదట శిష్యునికి ఉపదేశించుతాడు. ఇది మొదటి మెట్టు అంటాడు. ఇక రెండవ మెట్టు స్వామీ, నాకు మోక్షం కలిగించండని శిష్యుడడిగితే, ఏం ఫరవాలేదు, యింకొకటి చెబుతాను. అది చేయమంటాడు. ఏమిటది ? **'గురుపాదోదకం పీత్వా పునర్జన్మ న విద్యతే'** - గురువుగారి పాద్రములు కడిగి త్రాగితే ఇక మళ్ళీ జన్మ ఉండదు అంటాడు. గురువుగారి పాదాలు కడిగి త్రాగి నందువల్ల శిష్యునికి ముక్తి వస్తుందో లేదో తెలియదు గాని, ఆపాదాలకు ఏదైనా పేడ, బెల్లం అంటుకొని ఉంటే అది కాస్త లోపలికి పోయి శిష్యుడు చస్తాడు. ఈ జన్మ ఉండదు ! (సభలో నవ్వులు).

ఇంక కొన్నాళ్ళు పోయిన తరువాత శిష్యుడితో గురువు మూడవ మెట్టొకటుంది. పెద్ద మెట్టు అది ఎక్కితే అమృతత్వము వస్తుంది - (చావులేని స్థితి) అంటాడు. శిష్యుడు సరే స్వామి చెప్పండి అంటాడు. 'గురోరుచ్ఛిష్ట భోజనం అమృతం' - గురువుగారి ఎంగిలి తింటే అమృతమవుతుంది అంటాడు. అప్పుడు గురువుగారు అది ఇది వేసి కలిపి పిసికి తానింత తిని, ఆ ఎంగిలి కూడే శిష్యుడి కింతపెడతాడు. ఆ ఎంగిలి కూడే మహా ప్రసాదమని శిష్యుడు కళ్ళుమూసికొని ఆరగిస్తాడు (సభలో నవ్వులు). ఆ తరువాత మంత్రోపదేశం. ఇప్పటిదాకా గురువుగారు శిష్యుడి చేత ఎంగిలి కూడు తినిపించాడు, కాళ్ళు కడిగిన నీళ్ళు త్రాగించాడు, ఇక శిష్యుడు అన్నిటికి లోపడినట్లే కదా ? ఏం చేసినా ఫరవాలేదు. తరువాత శ్రీత్రోపదేశం.

'నమశ్శివాయ' అనో, 'వాసుదేవాయ నమః' అనో, మరేదో మంత్రం రహస్యంగా శిష్యుని చెవులో చెబుతాడు. ఉఁ వాయించండి, వాయించండి. వేళాలు వాయించండి అంటాడు. ఆధ్వనిలో చెప్పిన మంత్రం ఏమిటో కూడ సరిగా శిష్యునికి వినబడదు. అర్థం కాదు. తరువాత 'ఈమంత్రం' యింకెవరికైనా చెప్పావంటే నీవు తలపగిలి చస్తావంటాడు (సభలో నవ్వులు). ఇక ఈశిష్యుణ్ణి, ఎవరైనా, గురువు గారు మీకే మంత్రం చెప్పారని అడిగితే అతడు చచ్చినా చెప్పడు. చెప్పకూడదంటాడు. ఇతరులకెవ్వరికీ ఈ మంత్రం చెప్పకూడదని గురువు శిష్యుణ్ణి ఎందుకు శాసిస్తాడు ? అతడెవరికైనా చెబితే తన దగ్గరకు శిష్యులు రారు. వ్యాపారం నడవదని భయం (సభలో నవ్వులు) శ్రీరామానుజాచార్యులను కూడ ఆయన గురువు తానుపదేశించిన మంత్రాన్ని ఎవరికీ చెప్పవద్దన్నాడట ! కాని రామానుజుడు అందరికి కొండెక్కి తారక మంత్రం చెప్పాడు. అయినా ఆయన తల పగిలి చావలేదేం మరి? (సభలో నవ్వులు)

గురువులుపదేశించే మంత్రాలు కొన్ని :-

నా చిన్ననాడు మా ఊరికొక గురువు వచ్చాడు. అతడు ఆడవాళ్ళకుపదేశించడట. అందుకని మామేనత్త ఆయన చెప్పే మంత్రం నన్ను నేర్చుకుని వచ్చి తనకు చెప్పమన్నది. నాకాయన చెప్పిన మంత్రం ఇది.

శ్రీరామ రామ రామేతి రమేరామే మనోరమే
సహస్రనామ తత్తుల్యం రామ నామ వరాననే॥

నన్ను యిది ఎవరికీ చెప్ప వద్దన్నాడు ఆ గురువుగారు. తరువాత దీన్ని మా మేనత్తకు చెప్పాను. అప్పటికి నాకు సంస్కృతం తెలియదు. కాన్త పెదయి నంస్కృతం చదువుకున్న తరువాత, వేదములల లో ఉన్న ఛందస్సుకే మంత్రమంటారని తెలుసుకున్నాను. ఈమంత్రం ఎక్కడుందోనని వేదాలు వెతకి చూచాను. కాని అది ఎక్కడా కనపడలేదు. సామాన్యంగా అనుకునేదేమంటే ఈమంత్రం శంకరుడు, పార్వతికి ఉపదేశించాడని శంకరుడు పార్వతిలో. 'వరాననే - ఓచక్కని ముఖం కలదానా, నేను శ్రీరామ రామ, రామ అని రాముని యందు రమిస్తాను. ఆనామం సహస్ర నామాలకు సమానమైంది అంటాడు. ఇది పైశ్లోకం యొక్క అర్థం. ఇవి సామాన్య గురువులు చేసే ఉపదేశాలు.

అచల గురువులు :-

ఇంకొక రకం గురువులున్నారు. వారు అచల పరిపూర్ణులు. వారు అంతా పరిపూర్ణమే అంటారు. ఆత్మకేదీ అంటదు. ఏం చేసినా ఫరవాలేదని చెప్పి వ్యభిచరించడం, మాంసాదులు తినడం, త్రాగడం యిలాంటి వన్నీ వారు చేస్తుంటారు. వారికి చదువు సంధ్యలుండవు. ఈ గురువులు శిష్యులకు పదేశించే దేమిటి ?

'అయం బాహ్యో వ్యర్థః కోపి నభవతి'

ఏమీ-లేదు-ఇది-వట్టి-మట్టి-బుర్ర (అని వ్యంగ్యంగా పదాలు ఒక లయలో అన్నారు శ్రీగురుదేవులు) (సభలో నవ్వులు) శిష్యా ! ఈమంత్రంలో ఎన్ని అక్షరాలున్నాయి ? పన్నెండు. కనుక ఇది ద్వాదశాక్షరి, దీన్ని జపించుకోపో, అంటాడు గురువు. ఇక శిష్యుడు జపిస్తుంటాడు. 'ఏమీ లేదు యిది వట్టి మట్టి బుర్ర - ఏమీ లేదు యిది వట్టి మట్టి బుర్ర' అని చివరికి శిష్యుడు మట్టి బుర్రే అవుతాడు (సభలో నవ్వులు)

ఈ అచల గురువులకు శిష్యులు క్షీరాభిషేకమని చేస్తారు. క్షీరాభిషేకమంటే ఏమిటి ? ఒక పెద్ద గంగాళంలో గురువును కూర్చోబెట్టి పాలు తెచ్చి నెత్తిన గ్రుమ్మరిస్తారు. అతన్ని గంగాళంలో ఎందుకు కూర్చోబెడ తారంటే - నెత్తినపోసిన పాలు క్రిందపడి పోకుండ గంగాళంలో ఉంటాయి కదా ? అందుకని అందులో ఆపోసిన పాలతో పాటు ఆయన ఒంటి మీద ఉన్న చెమట కూడ గంగాళంలో కారుతుంది. అది ప్రసాదంగా అతని శిష్యులంతా త్రాగుతారు. (సభలో ఛీఛీ అను శబ్దము, నవ్వులు విననయ్యెను) ఆపాలు పోసిన వాళ్ళు గురువును అట్లాగే గంగాళంలో ఉంచితే బాగుండును. చీమలన్నా పీక్కుతిని చస్తాడు (సభలో నవ్వులు). పీడ వదులుతుంది. ఈగురువుల వెంట తిరిగే ఆడవాళ్ళకు బొత్తిగ మతి ఉండదు. వారు గురువులకు పాదసేవలని యింకా ఏమిటోమిటో చేస్తారు. అరే ! ఇంట్లో భర్త ఉన్నాడు. అతనిని వదలి కులస్త్రీ పరపురుషుడి వెంట తిరగడమేమిటి అనే జ్ఞానం కూడ వీళ్ళకు ఉండదు.

గురువు గారికి అన్నాభిషేకమని యింకొకటి చేస్తారు. ఆడవాళ్ళు, మొగవాళ్ళు కలిసి గురువుగారి ఒంటినిండా అన్నం మెల్లగా మెత్తుతారు. తరువాత ప్రసాదంగా దాన్ని తింటారు. అన్నాభిషేకం అలా చేయకుండ బాగా ఉడుకుడుకు అన్నం గంజితో సహా గురువుగారి నెత్తినపోస్తే బాగుంటుంది చస్తాడు. శిష్యులకు ఆపీడ వదులుతుంది (సభలో నవ్వులు) ఇంకా కొందరు గువీరువులున్నారు. వారు తమ వెంట్రుకలు శిష్యులకిచ్చి పూజ చెయ్యమంటారు. ఈ తెలివి తక్కువ శిష్యులు ఆ పిచ్చిపని కూడ చేస్తుంటారు.

నేను బిహారులో ఉండగా ఒక చోట పెండ్లి చేయించవలసి వచ్చింది. ఆయింటి యజమాని రు.2000ల గవర్నమెంటు ఉద్యోగి బాయిలర్ ఇన్స్‌పెక్టర్‌గా పనిచేస్తున్నాడు. నన్ను అతని కుమార్తె పెండ్లికి పౌరోహిత్యం వహించ మన్నాడు. ఆరాష్ట్రంలో ఒక ఆచారం ఉంది. పిల్లలకు పెండ్లి చేయాలంటే వారి తల్లిదండ్రులు మొదట గురూపదేశం పొంది ఉండాలట ! అందుకని ఒక గురువును పట్టుకు వచ్చారు. అతన్ని చూస్తే నాకు గురువనిపించలేదు. అతడు చదువుకున్న వాడుగా కనిపించలేదు. ఈ ఉద్యోగి ఆవచ్చిన గురువును చూచాడు ఏమండీ, గోపదేవ్ గారూ, 'నాకు ఈ దరిద్రుని దగ్గర ఉపదేశం పొందటం యిష్టం లేదు. మీరే నాకు ఉపదేశం యివ్వాలి అన్నాడు. నేనాయనతో, నాకు ఉపదేశం యిచ్చే అలవాటు లేదు, నేనెప్పుడూ అది చెయ్యలేదు. అది చెయ్యడం ఎలాగో కూడ నాకు రాదే, పైగా ఆ వచ్చిన అతను బాధపడతాడుకదా ? అన్నాను. 'అతని సంగతి నేను చూచుకుంటాను లెండి, మీరు నాకు చెవిలో మంత్రం ఉపదేశించండి చాలు అన్నాడు. మంత్రం చెప్పమంటే చెబుతాను, కాని నేను కాళ్ళు మాత్రం పట్టించుకోనన్నా. తరువాత ఏదో జరిగపోయిందనుకోండి. ఈవిధంగా భారతదేశంలో ఈనాడు గురుశిష్య సంబంధం చాల వరకు చెడిపోయింది.

హృషీకేశుడు, గుడాకేశుడు అంటే :-

సంజయ ఉవాచ
ఏవముక్త్వా హృషీకేశం గుడాకేశః పరంతప ।
న యోత్స్య ఇతి గోవిందముక్త్వా తూష్ణీం
బభూవ హ॥ గీత.2-9

తనకు కలుగుతున్న దుఃఖాన్ని అర్జునుడు కృష్ణునికి చెప్పి 'నేను యుద్ధం చేయను అని మౌనంగా రథంలో కూర్చున్నాడట.

భారతీయ గురుశిష్య సంప్రదాయం మనం గీతలో చూస్తాం. కృష్ణుడు యిక్కడ గురువు. అర్జునుడు శిష్యుడు. కృష్ణుడు తాత్వికుడుగా, గురువుగా యోగ్యత కవాడు అని చెప్పడానికి వీలుగా ఆయనకు గీతలో చాల పదాలు వాడబడినాయి. పైశ్లోకంలో **'హృషీకేశు'డని కృష్ణునికి, గుడాకేశుడని అర్జునునికి ఈ పదాలు వ్యాసుడు వాడాడు.** గురుశిష్యులు ఎలాంటి

आर्य समाज ने विजयदशमी पर निकाली भव्य शोभायात्रा

हैदराबाद, 13 अक्तूबर-(मिलाप ब्यूरो) आर्य प्रतिनिधि सभा, आंध्र प्रदेश-तेलंगाना तथा आर्य समाज, किशनगंज के संयुक्त तत्वावधान में 89वीं विजयदशमी शोभायात्रा धूमधाम से निकाली गई।

आज यहाँ जारी प्रेस विज्ञप्ति के अनुसार, किशनगंज से आरंभ होकर शोभायात्रा कोठी स्थित पं. नरेन्द्र प्रतिमा के पास सभा में परिवर्तित हुई। आर्य समाज, सिकंदराबाद के अध्यक्ष मामिडी श्रीनिवास दंपत्ति ने शोभायात्रा का नेतृत्व किया। मुख्य अतिथि के रूप में भाजपा विधायक टी. राजा सिंह उपस्थित हुए। आर्य समाज की ओर से उनका सम्मान किया गया। आचार्य वसुधा शास्त्री ने अवसर पर पर्व संदेश दिया। विधायक राजा सिंह ने अपने संबोधन में युवा पीढ़ी का जागृत होकर राष्ट्र सेवा के प्रति समर्पित होने का आह्वान किया। उन्होंने विशेष रूप से हैदराबाद मुक्ति आंदोलन के क्रांति दर्शी नारायण राव पंवार का उल्लेख किया। विधायक ने आर्य समाज द्वारा राष्ट्रीय एकता, गौरक्षा और वैदिक संस्कारों के प्रति जागरूकता लाने के प्रयास की सराहना की। साथ ही महर्षि दयानंद के विचारों को घर-घर पहुँचाने की आवश्यकता जतायी। शोभायात्रा में गुरुकुल एवं आर्य समाज से जुड़े युवक-युवतियों ने डांडिया नृत्य एवं शस्त्र विद्या का प्रदर्शन किया। आर्य प्रतिनिधि सभा के आंध्र-तेलंगाना अध्यक्ष प्रो. विट्ठल राव आर्य ने तेलंगाना राज्य की वर्तमान गतिविधियों पर प्रकाश डालते हुए केंद्र व राज्य सरकारों से अपील की कि यदि युवा पीढ़ी को भ्रमित होने से नहीं बचाया गया, तो राष्ट्रीय सुरक्षा खतरे में पड़ जाएगी। उन्होंने कहा कि शहीदों की कुर्बानी का श्रेय आर्य समाज को जाता है। महर्षि दयानंद के विचारों से प्रेरित होकर राजनेताओं व क्रांतिकारियों ने देश को आज़ाद कराया। शोभायात्रा में समाज के प्रतिनिधियों का आर्य प्रतिनिधि सभा एवं सुल्तान बाज़ार आर्य समाज की ओर से सम्मान किया गया। महामंत्री हरिकिशन वेदालंकार के धन्यवाद ज्ञापन, शांति पाठ एवं जयघोष के साथ कार्यक्रम संपन्न हुआ।

आर्य समाज उत्तर लालागुड़ा का विजय दशमी जुलूस का दृश्य

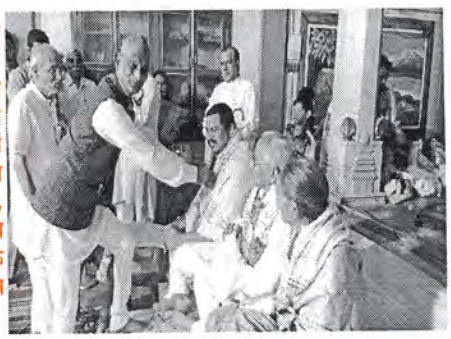

विजय दशमी के जुलूस की झांकियाँ । जुलूस को सम्बोधित करते हुए गोषामहल के विधायक श्री टी. राजा सिंह जी सभा प्रधान श्री विट्ठल राव आर्य एवं मंत्री श्री हरिकिशन जी वेदालंकार । कोठि स्थित पं. नरेन्द्रजी के प्रतिमा के पास जुलूस के समापन समारोह पर सभा के अधिकारि एवं आर्य समाज सुल्तान बाज़ार के अधिकारियों के द्वारा जुलूस का सम्मान । जुलूस का नेतृत्व करते हुए आर्य समाज, आर.पी. रोड़, सिकन्दराबाद के प्रधान श्री मामिड़ी श्रीनिवास जी अपनी धर्म पत्नि के साथ । गोषामहल के विधायक श्री टी. राजा सिंह जी का सम्मान करते हुए सभा उपप्रधान डॉ. लक्ष्मण सिंहजी ।

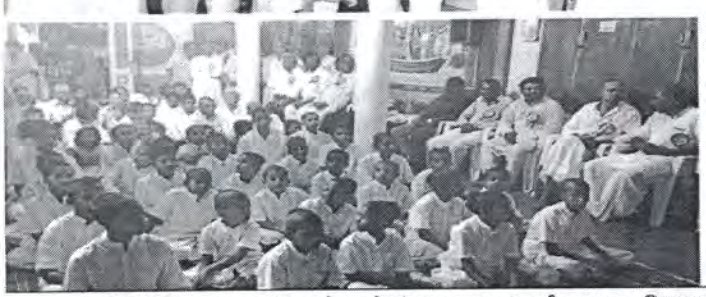

आर्य प्रतिनिधि सभा, आंध्र प्रदेश-तेलंगाना तथा आर्य समाज, किशनगंज के संयुक्त तत्वावधान में निकाली गयी विजयदशमी शोभायात्रा तथा सभा का दृश्य। अवसर पर उपस्थित विधायक टी. राजा सिंह एवं अन्य।

Date of Publication 2nd & 17th of every Month, Date of posting 3rd and 18th of every month
आर्य जीवन 18-10-2016 Registered-Reg. No. HD/783/2015-17 RNI.No.52990/93

ఆర్య జీవన్
హిందీ-తెలుగు ద్విభాషా పక్ష పత్రిక
Editor: Vithal Rao Arya, M.Sc. LL.B., Sahityaratna
Arya Prathinidhi Sabha AP-Telangana, Sultan Bazar, Hyderabad-95.
Phone No. 040-24753827, 66758707, Fax: 040-24557946
Annual subscription Rs. 250/- సంపాదకులు - విఠల్‌రావు ఆర్య, ప్రధాన్ సభ

To,

श्रद्धांजलि

परोपकारिणि सभा के अध्यक्ष डॉ. धर्मवीर जी के अन्त्येष्टि के बाद श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए सार्वदेशिक सभा के प्रधान स्वामी आर्यवेश जी तथा अन्य प्रतिष्ठित सदस्य गण

आर्य समाज, उम्दा बाज़ार ने मनाया विजयदशमी पर्व

हैदराबाद, 13 अक्तूबर-(मिलाप ब्यूरो) आर्य समाज, उम्दा बाज़ार ने विजयदशमी पर्व उल्लास के साथ मनाया।

देवयज्ञ के साथ विजयदशमी कार्यक्रम का शुभारंभ हुआ। अवसर पर पं. विजय कुमार के पौरोहित्व में आहुतियाँ दी गई। भगत सिंह एवं इंद्रसेन सपत्नीक यज्ञ के यजमान रहे। यज्ञोपरांत भक्त राम ने ओम ध्वजारोहण किया। अवसर पर ध्वज गीत का सामूहिक रूप से गायन किया गया। उपस्थितजनों को विजयदशमी की शुभकामनाएँ देते हुए भक्तराम ने कहा कि यह पर्व अन्याय और अधर्म पर न्याय और धर्म के विजय का प्रतीक है। हम सभी को मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम के आदर्शों का अनुसरण करना चाहिए। इसके बाद दूध बावली स्थित वासवी भवन प्रांगण भवन में समाज के प्रधान रामचन्द्र कुमार ने ओम ध्वज फहराया। अपने संबोधन में उन्होंने विजयदशमी पर्व के महत्व पर प्रकाश डाला। उन्होंने उरी में शहीद होने वाले जवानों को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा कि देश के लिए बलिदान देने वालों को सदैव याद रखा जाएगा। अवसर पर सत्यनारायण ठाकरे ने भी अपने विचार रखे। शाम को पारंपरिक जुलूस निकाला गया, जो आर्य समाज, किशनगंज के विशाल जुलूस में शामिल हुआ। समाज के मंत्री डॉ. वीरेन्द्र कुमार, उप-मंत्री सुरेश कुमार, संयोजक नीलेश दुबे, रमेश कल्याणी एवं योगेश कुमार ने आयोजन में सहयोग दिया।

आर्य समाज, उम्दा बाज़ार द्वारा आयोजित विजयदशमी कार्यक्रम का दृश्य।

THE VIEWS & THE NEWS PUBLISHED IN THIS ISSUE MAY NOT NECESSARILY BE AGREEABLE TO THE EDITOR
Editor Vithal Rao Arya ● acharyavithal@gmail.com, Mobile : 09849560691
సంపాదకులు : శ్రీ విఠల్‌రావు ఆర్య, ప్రధాన్, ఆర్యప్రతినిధి సభ ఆ.ప్ర.-తెలంగాణ, సుల్తాన్‌బజార్, హైదరాబాదు-95. Ph: 040-24753827, Email : acharyavithal@gmail.com
संपादकः श्री विठ्ठलराव आर्य प्रधान सभा ने सभा की ओर से आकृति प्रेस चिक्कडपल्ली में मुद्रित करवा कर प्रकाशित किया।
प्रकाशकः आर्य प्रतिनिधि सभा आं.प्र.-तेलंगाना, सुल्तान बाज़ार, हैदराबाद तेलंगाना-95.